वाणी मुक्ता

मूल ग्रंथ

कुलजम सरुप तारत्तम वाणी से साभार

श्री प्राणनाथ मिशन दिल्ली

प्रकाशक :

श्री प्राणनाथ मिशन

डी १९३, डिफेन्स कालोनी

नई दिल्ली ।

संयोजिका

विमला मेहता

प्रथम संस्करण— १५०० प्रतियां

मूल्य पांच रुपये

मुद्रक :

कपूर प्रिंटिंग प्रेस,

दिल्ली ।

दो शब्द

आत्मदर्शी, तत्वदर्शी महापुरुषों का परिचय उनकी वाणी और कृतत्व होता है। उनके आत्मानुभव की ज्योति सदैव एकरस सभी का कल्याण करने वाली होती है। वे समय विशेष पर आकर भूत और भविष्य को वर्तमान में मिला देते हैं। उनका ज्ञान सर्वदेशीय एवं सर्वकालीन होता है। महामति प्राणनाथ ऐसे युग में अवतरित हुए जब धर्म का वास्तविक स्वरूप भूल कर लोग रुढ़ियों और अन्धविश्वासों को धर्म जान कर उन्हें पकड़े बैठे थे। उन्होंने समस्त मानव जाति का मार्ग दर्शन करके ही मानव धर्म-विश्व धर्म की स्थापना की। कोई वर्ग या जाति विशेष उनका लक्ष्य नहीं था। उन्होंने तो धर्म के विभिन्न अंगों, विचारों और दर्शनों का ऐसा समन्वय किया कि आज जो भी उनकी वाणी को पढ़ता है महामति उसे अपने ही लगते हैं। धर्म को उन्होंने वाह्य रूप से स्वीकार नहीं किया परन्तु उसकी अमुभूति एवं आत्मा को सत्य माना है। अनुभूति जन्य ज्ञान-धर्म एक ही है। उन्होंने कहा धर्म एक ही है। मार्गों की दिखाई देने वाली विभिन्नता भी सच्ची अनुभूति से एक ही लक्ष्य की ओर संकेत करती है।

मिथ्याचार और आडम्बरों से सत्य धर्म की हानि होती है। महामति ने उनपर प्रहार करके धर्म के, एक विश्व धर्म के अनुकूल वातावरण बनाया। महामति ने रुढ़ियों तथा अन्धविश्वासों के जाले से मुक्त करके सभी धर्मों का सत्य स्वरूप दिखाया और कहा कि प्रत्येक धर्म कल्याणकारी है यदि उसे शुद्ध रूप में स्वीकार कर लिया जाए। उन्होंने कहा धर्म परिवर्तन की नहीं, धर्म को समझने की आवश्यकता है। उन्होंने विचार स्वतंत्रय, निर्भीकता प्राणीमात्र से प्रेम, सत्य अहिंसा तथा उच्च कोटि के नैतिक गुणों पर बल दिया सबल स्वस्थ शरीर ही पुष्ट आत्मा का प्रकटीकरण होता है। धर्म कायरों के लिए

नहीं हैं सच्चे शूरवीर ही इस मार्ग की कठिनाइयों को झेल सकते हैं। ऐसा कहकर शरीर की अवहेलना करने और उसे कष्ट देने से रोका।

महामति ने सत्य को स्वीकार किया। असत्य को अस्वीकार ही नहीं किया अपितु उसे फटकार कर दूर कर दिया। जो भूले भटके हैं, राह पाने के इच्छुक हैं उन्हें मार्ग दिखाने की सहानुभूति से महामति द्रवित हैं। निराश्रय के आश्रय एवं निर्बलों के संबल हैं। किन्तु बाह्य आडम्बरों में खोए पोंगा पंथियों को बुरी तरह झकझोर दिया है। उनके लिए भी कल्याण की कामना करते हुए एक ऐसा मार्ग प्रशस्त किया जिस पर चलकर वे स्वयं भी अपना कल्याण करें तथा दूसरों को भी उबार लें।

जहां तक महामति की सुधार प्रणाली का प्रश्न है वहां किसी प्रकार का पक्षपात नहीं है। हिन्दू मुसलमान का भेद नहीं। जहां जो कमी खटक गई उसे दूर करके परम तत्व को पा लेने की आग्रह पूर्ण प्रेरणा है। अपने को बड़ा बताने के लिए अथवा केवल निंदा के लिए किसी को कम नहीं बताया।

महामति ने अपनी आत्मा की पहचान पर बहुत बल दिया है। अपने आप को पहचाने बिना परमात्मा को पाना कैसे सम्भव हो सकता है? आत्मा परमात्मा का अंश ही तो है। अंश को जानने से अंशी का बोध हो जाता है अंश का रूप जान लें तो विशाल परम तत्व का रहस्य सामने आ जाता है। परन्तु इसके लिए साधना करनी पड़ती है। बिना साधना के भ्रमजाल नहीं टूटता। यह माया इस जीव को भटकाती रहती है। इस माया में भ्रमित मानव दोस्त को दुश्मन समझ कर मार्ग बताने वाले सद्गुरु की शरण से वंचित रह जाता है।

परमात्मा से मिलन केवल दिखावे की उपासना, पूजा और निमाज़ से सम्भव नहीं। उसके लिए तो सच्ची तड़प, मिलने की तीव्र प्यास और गुण अंग इन्द्रियों के मोह को भस्म कर देने वाले विरह की आवश्यकता रहती है। जब तक विरह, व्याकुलता नहीं तब तक वह प्रियतम पास नहीं आता।

आत्मा उसके विरह में ही सुख पाने लगती है क्योंकि विरह का खेल भी तो उस प्रियतम ने ही रचा है और मिलन की आशा भी इसी विरह में पलती है। प्रियतम परमात्मा ने संसार की रचना ब्रह्मात्माओं को कष्ट देने के लिए नहीं की वरन् दुख का आभास देकर उनके आनन्द को अनन्त गुणा बढ़ाने के लिए की है। खेल में परमात्मा को पाने के लिए दुख का आभास आवश्यक है। ज्ञानी दुख की महिमा को समझता है अज्ञानी रोता है। जिसने खेल को समझ लिया उसे दुख सुख में अन्तर दिखाई नहीं देता, क्योंकि दोनों नश्वर हैं वह तो इन दोनों से ऊपर उठ कर अविनाशी आनन्द को यहीं बैठे पा लेता है। फिर वह प्रियतम के अति निकट हो कर नित्य महारास तथा परमधाम के आनन्द में मग्न रहता है।

महामति का कुलजम एक विशाल सागर है। उसका प्रत्येक खण्ड आकाश की ओर उठती एक विशाल लहर है। प्रत्येक चौपाई एक सीप है जिसमें शब्दों के मोती अर्थों की चमक के साथ भरे हुए हैं। जो जितना गहरा घुसता है उतने ही रत्न निकाल लाता है। श्रीमती विमला मेहता ने उस महान सागर से कुछ मुक्ता चुने हैं। अभी अनेकों बहुमूल्य रत्न उसमें भरे पड़े हैं। यह ग्रन्थ कुलजम का सार या सक्षेप नहीं महामति की वाणी के कुछ कण हैं जिनसे उनके कुछ भाव प्रकट करने की चेष्टा की गई है। यह तो एक प्रयास मात्र है कि महामति का थोड़ा परिचय देकर उनकी वाणी को पढ़ने के लिए जिज्ञासा उत्पन्न की जा सके। आशा है इस संकलन को देखकर पाठकों में कुलजम को पढ़ने की चाह पैदा होगी।

इस संकलन में संयोजिका ने अनेक विषयों को लेकर महामति के वचनों का संकलन किया है। अनादि प्रश्न में आत्मा में उठने वाले प्रश्नों का परमात्मा की ओर से समाधान है सृष्टि रचना क्यों हुई? संसार, माया और दज्जाल के पंजे में जकड़ी आत्मा का चित्रण है। आत्मा की पहचान तथा मानव देह की बहुमूल्यता को परखने का आह्वान है। घिसी पिटी रुढ़ियों से मुक्त धर्म को देखनेका आग्रह है। सच्चा हिन्दू और मुसलमान कौन है?

उनका परिचय दिया गया है। परमात्मा जाति पाँति से नही अहंकार रहित प्रेम से मिलते हैं। केवल कहने से नहीं आचरण से आत्मा स्वच्छ होती है। संसार में धर्म के नाम फैले वैमनस्य को दूर करने वाली सत्ता के रूप में महामति के प्रकटीकरण की घोषणा की है। अनेक साधनाओं तथा कर्मकांड में व्यर्थ समय व्यतीत करने से लाभ नहीं, सच्चे मन से गोपी भाव से श्री कृष्ण प्रियतम को रिझाना ही सहज ग्राह्य सरल साधना है। परमात्मा को पाने के लिए प्यासी आत्मा के विरह का वर्णन है और अन्तिम प्रकरण में मिल जाने के आनन्द का, संयोग का वर्णन है। वह कौन सी अनुभूति हैं जिसे पाने के लिए धर्म मार्ग पर चला जाए उसका वर्णन इस अन्तिम प्रकरण में है। इस प्रकार परमात्मा से बिछुड़ कर फिर परमात्मा की ओर कैसे जाना होता है इसका चित्रण इस संकलन में करने का प्रयास किया गया है। कभी न कभी उस मंजिल पर सबको जाना ही है सबसे सुगम राह दिखा दी गई। चलना तो सबको स्वयं है,स द्गुरु एवं उनके वचन पथ प्रदर्शन करते हुए सहायक बन जाते हैं।

साधारण पाठक एवं जिज्ञासु को इस संकलन से आत्म बल मिले इस आशा के साथ,

आपका ही,

शिव हरित शर्मा

संयोजिका की ओर से

महामति प्राणनाथ १६१८-१६९४ प्रणीत 'तारतम वाणी "कुलजम-सरूप" सतरह ग्रन्थों का संकलन एक वृहत ग्रन्थ है। इसकी १८७५८ चौपाइयों में विश्व की सभी धार्मिक परम्पराओं का अनूठा संगम दिखाई देता है। वेद शास्त्रों के सार रूप श्री मद् भागवत की रास लीला का प्रत्यक्षीकरण इस संकलन का आरम्भ है तो कतेब ग्रन्थों की आखिरी मंज़िल कियामत की घोषणा पर इसका समापन हुआ है। महामति ने वेद और कतेब की न समझ में आने वाली; रहस्यमयी तथा असम्भव दिखाई देने वाली बातों को स्पष्ट किया तो सभी धर्मग्रन्थ खुल कर सामने आ गए। धर्म के विषय में फैली भ्रान्तियों तथा कल्पनाओं का निराकरण हुआ। धर्म की सत्यता, ज्ञान की हकीकत तथा मारिफत का मर्म संसार ने जाना। आत्म जागृति के लिए कौन सी साधना किस स्तर तक ले जाती है यह राज़ जाहिर हुआ। अनेक ईश्वरों की उपासना, अनेक पंथों के झमेलों से मुक्त करके महामति ने एक ही पूर्ण ब्रह्म परमात्मा को पहचान कर उसमें एक हो जाने का, सरल एवं सहज ग्राह्य मार्ग सुझाया। धर्म ग्रन्थों के शाब्दिक अर्थों के पीछे छिपी मर्म की बातों की पहचान हो जाने से जन साधारण में उनके प्रति सम्मान बढ़ा। अपने पंथ की घुटन से निकल कर परमात्मा के उन्मुक्त ज्ञान का प्रकाश मानव ने देखा।

परमात्मा एक है इस बात को तो सब स्वीकार करते हैं—महामति ने घोषणा की, कि धर्म भी एक ही है। सभी धर्म ग्रन्थ परमात्मा के अटूट ज्ञान सागर की एक बूंद मात्र का विस्तार नहीं कर पाते। विश्व धर्म, मानव धर्म एक ही है। प्रत्येक ग्रन्थ उसके अनेक पहलुओं पर विचार देते हुए उसके किसी एक पहलू पर विशेष बल देता है। सबको इकट्ठा देखने

पर भी धर्म का पूरा स्वरूप सामने नहीं ग्राता । हम ग्रनाड़ी ग्रौर कूपमंडूक बन कर सत्य के प्रत्यक्षीकरण से कितने दूर रह जाते हैं। विश्व धर्म एक है ग्रपनी इस घोषणा को ग्रपने खुलासा ग्रन्थ में स्पष्ट करते हुए महामति ने बताया कि सभी धर्म ग्रन्थों में मानव को सुधारने ग्रौर धर्म को ग्राचरण में लाने वाली बातें प्रायः एकसी ही हैं । भाषा की भिन्नता के कारण ग्रलगाव दिखाई देता है । देश ग्रौर वातावरण भी ग्रलग रहने के कारण धर्म पर्वतकों को मानव की रुचियों तथा उनकी क्षमता को देखते हुए ग्रपनी बात कहनी पड़ी। विश्व की सामयिक ग्रावश्यकता के ग्रनुसार जिस मसीहा से परमात्मा जितना कहलवाना चाहते थे उसने उतना ही कहा । यह भी कहा कि हमसे पहले ग्राने वाले पैगम्बरों ने जो कहा उसे हमने फिर से ग्रापको याद दिलाने के लिए ग्रापकी भाषा में इसलिए कहा कि यह बातें ग्राप के लिए सहज ग्राह्य हो सकें। सबने यह घोषणा की कि कलियुग के ग्रन्तिम चरण में एक महान ग्रात्मा का ग्रवतरण होगा जो सभी धर्मग्रन्थों की कड़ियां मिला कर संसार को एक विश्व धर्म का दर्शन देगी । उनके साथ हम फिर ग्राएंगे ग्रौर ग्रपनी कही बातों की पुष्टि करेंगे। महामति ने दर्शाया कि पुराण ग्रौर कुरान के कथानकों में हद दर्जे की समानता है । उन्होंने उन समान बातों को सामने लाकर, उनका ही प्रचार किया ग्रौर धर्म के कारण फैले वैमनस्य को दूर करने का प्रयास किया ।

कतिपय रुढ़ियों एवं ग्रंध विश्वासों को ही लोग धर्म मान बैठे थे। उपासना की रीतियों एवं कर्मकांड को ही सर्वस्व मान तथाकथित धार्मिकों ने धर्म का वास्तविक स्वरूप छिपा दिया था। परिणाम स्वरूप तार्किक ग्रौर बुद्धिवादी धर्म से दूर भागने लगे थे। महामति ने ग्राडम्बरों से मुक्त धर्म का हृदय ग्राही स्वच्छ रूप दिखा कर परमात्मा ग्रौर ग्रात्मा के पारस्परिक सम्बन्ध ग्रौर लीला को घरेलू सम्बन्ध की परिभाषा में प्रत्येक मानव के लिए उसे ग्राह्य बना दिया ।

ब्रह्म ज्ञान को प्रकट करने के लिए किसी कठिन भाषा का सहारा न लेकर महामति ने जन साधारण की बोलचाल की भाषा हिन्दुस्तानी में अपनी बात कही। जिस धर्म के लोग उनसे मिलने आए उनसे उन्हीं के होकर उनके धर्म ग्रन्थ से ही उन्होंने बात की। धर्म के मर्म को जान कर उन्होंने पाया कि सभी धर्मग्रन्थ एक ही बात को कह रहे हैं। हम अनजान बने आजतक एक दूसरे से दूर रहे। एक दूसरे के धर्म के प्रति सम्मान जागा तो लोग अपने ग्रन्थ के अतिरिक्त दूसरों के धर्म ग्रन्थ को भी देखने के लिए उत्सुक हुए। महामति के शिष्यों (साथियों) से ही इस परम्परा का चलन हुआ। उनके जीवन काल में ही धर्म समन्वय का मार्ग प्रशस्त हुआ। भागवत, कुरान और गीतादि ग्रन्थों में लोग समानता देखने लगे थे।

"चारों किताबों के मायने, और मायने चारों वेद।
लिख्या सब में जुदा जुदा, कियामत एकै भेद॥"

महामति प्राणनाथ

वास्तव में सभी धर्म ग्रन्थ संसार में आत्माओं के अवतरण की गाथा को दोहराते हुए उनके परमधाम लौटने के मार्ग को प्रशस्त करते हैं। संसार क्यों बना ? आत्माएं यहां क्यों आईं ? यहां उनकी लीला कैसी रही ? परमात्मा और परमधाम का स्वरूप कैसा है ? इन गूढ़ विषयों को महामति ने स्पष्ट किया। उन्होंने इस संसार के जीवन को आत्मा के अखंड अनन्त जीवन का एक विकल्प मात्र माना। उनकी वाणी आत्मा और परमात्मा की अनेक लीलाओं में से एक लीला, आनन्द क्रीड़ा और आत्माओं की संसार भ्रमण की कहानी है। परमधाम में सब पूर्ण था। अपूर्णता और अभाव का अनुभव कराने के लिए उस कादिर, प्रियतम परमात्मा ने अपनी माया से अपने स्वरूप को आत्माओं से ओझल किया। उनके ध्यान इस नश्वर ब्रह्मांड में केन्द्रित हुए तो इसके आकर्षण में पड़ कर वे अपने वास्तविक स्वरूप और शक्ति को भूल गईं। क्षण मात्र की लीला युगों का जीवन बन गई। प्रियतम ने अपना ज्ञान देकर उन्हें चेताया तो आनन्दमय जीवन का अभाव उन्हें असह्य लगने

लगा । माया रूप दज्जाल ने उन्हें प्रियतम से अलग रखने के लिए अनेक प्रलोभन दिखाए । अनेकेश्वरों तथा देवी देवताओं की सहज उपासना से आकर्षित कर उन्हें परमात्मा से विमुख किया । अनेक धर्म और पंथों का आडम्बर दिखा कर उनकी निर्मल बुद्धि को भ्रमित किया । परन्तु परमात्मा के प्रेम की प्यासी, उनके आनन्द में नित्य मग्न रहने वाली, उनके सत्य ज्ञान की इच्छुक आत्माओं ने अपनी खोज को जारी रखा और उनके लिए उनके प्रियतम परमात्मा स्वयं धरती पर उतर आए । उन्हीं स्थित प्रज्ञ आत्माओं, ब्रह्मसृष्टि, मोमिनों अथवा चुने हुए लोगों के लिए यह वाणी अवतरित हुई जो किसी भी प्रलोभन में पड़ कर अपने परमात्मा को खोना नहीं चाहती । प्रस्तुत संकलन का आरम्भ भी महामति के कलश ग्रन्थ में परमात्मा और आत्मा के बीच हुए संवाद से आरम्भ हुआ है । उन आत्माओं को महामति ने सुहागिन कह कर सम्बोधित किया है ।

परमात्मा को पाने के लिए जागृत आत्माओं का पथ प्रदर्शन राह को सुगम बना देता है ! सच्चा गुरू ही मार्ग दर्शक बनाता है । सावधानी से उसे खोज कर आत्म समर्पण से सहज मिलन हो जाता है । महामति ने गुरू के चुनाव में विशेष रूप से सतर्क रहने का आदेश दिया है ।

साधना का पथ प्रेम से सहज और अल्प बन जाता है । प्रेम कैसे आए इसकी चर्चा भी इस संकलन में हुई है । परमात्मा के बिना जब आत्मा तड़प उठती है, उसके बिना एक पल भी कटना कठिन हो जाता है तो प्रियतम का दीदार सम्भव है । महामति की वाणी में विरह वर्णन पत्थर दिलों को भी तड़पा कर रख देता है ।

प्रियतम से मिलने पर आत्मा संसार में कैसे रहती है ? उसे क्या आनन्द मिलता है ? इसका दिग्दर्शन वाणी मुक्ता के अन्तिम प्रकरण में है । इस संसार में कमल की भांति निःसंग रहते हुए नश्वर तथा अविनाशी सुखों में अन्तर को समझ कर परमानन्द के लिए उत्सुकता जगा देना ही वाणी का

उद्देश्य है। यहां के दुखों में अखडं सुख की झलक पा कर आत्मा का आनन्द अनन्त गुणा बढ़ जाता है।

वास्तव में महामति के स्वरूप को जानने के लिए उनके 'कुलजम' का आद्योपान्त अध्ययन एवं मनन आवश्यक है। उनकी अठारह हज़ार सात सौ अठावन चौपाइयों में से प्रत्येक चौपाई एक बात कहती है। प्रत्येक प्रकरण एक विषय को स्पष्ट करता है। असंख्य धर्म ग्रन्थों को उसमें संक्षिप्त और स्पष्ट किया गया है। उनकी कुछ चौपाइयों को दिखा कर वाणी का परिचय देना एक हास्यस्पद प्रयास ही है। तो भी व्यस्तता का बहाना करके महामति की वाणी से दूर भागने वालों के लिए एक शार्टकट तय्यार करने का प्रयास किया है। वास्तव में उस गन्तव्य के लिए शार्टकट की भी आवश्यकता नहीं। वह तो शाहरग से निकट, आत्मा के अति निकट है। उसे पाने के लिए केवल जाग जाना ही पर्याप्त है। जब तक निद्रा अथवा अज्ञान रहता है तब तक उस ओर चलने का प्रयास करना पड़ता है। कदम उठाते ही मंज़िल करीब आने की खुशी, उस उपवन की सुवास मिलने लगती है। जब तक प्रेम नहीं मिलता ज्ञान ही आत्मा का आलम्बन बनता है। प्रेम के आते ही मिलन हो जाता है।

इस संकलन में महामति की वाणी की कुछ चौपाइयों को ले कर कुलजम में वर्णित विषयों के अनुसार उन्हें संजोया है। उनके संदर्भ को देखने की इच्छा रखने वाले ज्ञान पिपासुओं के लिए ग्रन्थ का नाम, प्रकरण एवं चौपाई की संख्या मूल ग्रन्थ के अनुसार दे दी गई है। इतनी सरल वाणी भी कुछ लोगों के लिए समझना कठिन है ऐसा जानकर सामने के पृष्ठ पर उसका गद्यान्तरण करने का प्रयास किया है। इस संकलन को पढ़कर पाठकों को कुलजम स्वरूप की एक झलक मिल सके और सम्पूर्ण ग्रन्थ को देखने की उत्सुकता जगे तो मेरा यह प्रयास सार्थक होगा। आपसे यह अनुरोध है कि इस संकलन को देख कर तृप्त न होजाइये। उनके अथाह ज्ञान सागर में गोता लगा कर स्वयं देखिए कि उसमें कैसे अनुपम रत्न हैं।

जिन महानुभावों ने इस संकलन को प्रस्तुत करने के लिए प्रेरणा, प्रोत्साहन और सहयोग दिया उनका हृदय से आभार मानती हूँ। किसी को पुष्प अर्पित करते हुए अपने हाथों में भी सुवास बस जाती है। वाणी के मुक्ता चुनने में अपूर्व आनन्द का अनुभव मिला उसे अपनों को अर्पित करते हुए हर्ष होता है। परमात्मा के प्रति प्रेम बढ़े इसी कामना के साथ—

विनीत : **विमला मेहता।**

चौपाइयों के अन्त में प्रयुक्त अक्षर चिन्हों के मूल ग्रन्थों की सूची

रा०—रास
प्र० गु०—प्रकाश गुजराती
प्र० हि०—प्रकाश हिन्दुस्तानी
क०—कलश
स०—सनंध
कि०—किरंतन
खु०—खुलासा
खि०—खिलवत
परि०—परिक्रमा
सा०—सागर
सिन०—सिनगार
सिं०—सिंधी
मा०—मारफत सागर
क्या, छो०—क्यामत नामा छोटा
क्या, कि० ब०—क्यामत नामा बड़ा

ग्रन्थ के नाम के बाद क्रम से प्रकरण और चौपाई की संख्या है।

अनुक्रमणिका

अनादि प्रश्न (पृष्ठ—२)

सृष्टि रचना के समय से अर्थात अनादि काल से ब्रह्मा आदि देवताओं तथा ऋषि मुनियों के मन में यह प्रश्न उठते रहे कि मैं कौन हूं ? यह संसार क्या है ? इस रचना का उद्देश्य क्या है ? निजानंद स्वामी श्री देवचन्द्र जी के मन में बाल्यकाल में ही यह प्रश्न उठे। उनका समाधान पाने के लिए उन्होंने धर्म गुरुओं को टटोला। साधनाओं से शरीर तपाया अन्त में अनन्य भाव से की गई भक्ति से प्रसन्न होकर परमात्मा श्री कृष्ण ने स्वयं दर्शन दे कर उनसे प्रश्न किया तुम कौन हो ? कहां से आए हो ? यह संसार क्या है ? प्रथम प्रकरण में संसार में उनकी खोज का सारांश है।

सृष्टि रचना का कारण (पृष्ठ—६)

अखंड अविनाशी आनन्दमय चिदघन ब्रह्म को नश्वर, दुखमय ब्रह्मांड बनाने की क्यों आवश्यकता हुई ? अपनी प्रिय आत्माओं को इस ब्रह्मांड में भेज कर स्वामी ने अपने प्रेम का कैसा परिचय दिया ? इस संसार में उन्हें क्या आनन्द मिला ? इस प्रकरण में उसका ब्यौरा है।

माया-दज्जाल (पृष्ठ—१२, १६)

संसार में आने के बाद माया से आत्मा की सीधी टक्कर होती है। परमात्मा की दी हुई फरामोशी के कारण वह अपनी सामर्थ्य को भूल जाती है। परमात्मा के प्रेम का बल भी उसे नहीं मिलता तो वह माया से पछाड़ खा जाती है। अपने शुद्ध चैतन्य स्वरूप को भूल कर वह बेसुध संसारी जीवों का सा आचरण करती है। परमात्मा के ज्ञान का सहारा पा कर खड़ी होती भी है तो माया अपने अनेक करतब दिखाकर रूह को भुलावे में डाले रखती है।

संसार के लगभग सभी धर्म ग्रन्थों में माया, दज्जाल शैतान आदि कह कर परमात्मा से विमुख करने वाली सत्ता का परिचय दिया है। माया दज्जाल के दोनों प्रकरणों में शुभ से अशुभ की ओर प्रेरित करने वाली शक्ति का परिचय देकर साधकों को साधना पत्र पर चलने से पूर्व सावधान किया गया है।

मानव देह की उपादेयता (पृष्ठ—१८)

मानव शरीर में गुण भी हैं और दुर्वलताएं भी। इसके गुण अंग इन्द्रिय सहज प्राप्त सुखों की ओर आकर्षित होते हैं। मन भी माया का दास बना शरीर को कुकर्मों की ओर प्रवृत करता है। फलस्वरूप अमूल्य जीवन नष्ट हो जाता है। इस शरीर की गरिमा, सामर्थ्य और सम्भावनाओं को भूल कर मानव व्यर्थ की बातों में, कौड़ियां वटोरने में जीवन बर्वाद कर देता है। महामति की वाणी के संकलन में मानव तन की सम्भावनाओं एवं उपादेयता की ओर ध्यान दिलाया गया है।

कर्म कांड ही धर्म नहीं (पृष्ठ—२४)

कुछ एक रीतियों एवं रूढ़ियों को अपना कर लोग धार्मिक कहलाने लगते हैं। कर्मकांड मन शरीर को नियमित संयमित बनाता है परन्तु उन नियमों के अंतर्निहित अर्थ समझे बिना, कहने या करने का कोई लाभ नहीं। सब साधनाओं का लक्ष्य मन को निर्मल बनाना है। परमात्मा में प्रेम और अनन्य भाव रखने से ही मन पवित्र होता है। पवित्र मन को किसी साधना की आवश्यकता नहीं।

वैष्णव की कसौटी (पृष्ठ—३०)

शरीर और वस्त्रों को स्वच्छ रखना ही पर्याप्त नहीं। मन की स्वच्छता की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है। दिखावे के लिए पूजा पाठ, दान पुण्य आदि करना, गरीबों का पेट काट कर, उनका शोषण करके धर्मकार्य करना पुण्यवान नहीं बना सकता। परमात्मा का प्रेम तथा जागृत आत्मा ही

मानव की श्रेष्ठता को परखने की कसौटी है। जन्म से किसी को नीच समझ कर उनसे छुआ छूत करना मूर्खता है। इस प्रकरण में सच्चे हिन्दू, वैष्णव के लक्षण बताए गए हैं।

दीनदार मुसलिम (पृष्ठ—३४)

महामति ने एक धर्म के मानने वालों पर दूसरे के आचार विचार थोपने का कभी प्रयास नहीं किया। उनके पास जिस धर्म को मानने वाला व्यक्ति आया उसे उसी के धर्म ग्रन्थ की हकीकत बताई। प्रस्तुत संकलन में सच्चे मुसलिम की रहनी बताते हुए उनके शराअ के नियमों का रहस्य खोला गया है। यहां मात्र कुछ चौपाइयां दी गई हैं। सनंध ग्रंथ के मुसलिम की रहनी प्रकरण को पढ़ने से कर्मकांडी लोगों की अन्तर्दृष्टि खुल जाती है।

जाति भेद विचार (पृष्ठ—३८)

अपनी सत्ता और प्रभुत्व को कायम रखने के लिए मानव ने कई घिनौने नियम बना डाले हैं। शक्ति, विद्या और धन के बल पर ही नहीं वर्ण, वर्ग और जाति का भेद रखकर भी मानव ने मानव का शोषण किया है। तथा कथित नीची जाति के लोग, बुद्धि बल में अपेक्षाकृत कुशल रहने पर भी सदा दबाए जाते रहे। महामति ने मानव को गुणों एवं प्रेम की कसौटी पर परखने का आदेश दिया। पवित्र मन और जागृत आत्मा वाले चांडाल को कोरे कर्मकांडी ब्राह्मण से श्रेष्ठ कहा।

कथन, कर्म, आचरण (पृष्ठ—४२)

हम लोग कहते बहुत हैं करते कुछ नहीं। दिखावे के लिए कुछ शुभ कर्म कर भी लिए तो आचरण एवं चरित्र शुद्ध नहीं बन पाता। कहना करना और आचरण एक जैसा हो जाए तो मानव को अपनी मंजिल पर पहुँचने में तनिक भी विलम्ब नहीं होता। माया के दास इस रहस्य को क्या समझें।

महामति—विज्याभिनन्द बुद्धनिष्कलंक इमाम मेहदी (पृष्ठ—४८)

इस संसार में ब्रह्मात्माओं के अवतरण की गाथा को अंजील, कुरान तथा अनेक हिन्दू धर्म ग्रंथों में कहा गया है। भाषा, देशकाल तथा कहने वाले के ढ़ंग के कारण उनमें अंतर दिखाई दिया। महामति ने बताया कि कतेब ग्रंथों में नूह तोफान तथा हूद पैगम्बर की कथा पुराणों में गोपी कृष्ण की बृज और रास लीलाओं का ही संक्षिप्तिकरण है। यही नहीं संसार के लगभग सभी धर्म ग्रंथों में कलियुग के अन्तिम चरण में परम सत्ता के प्रकटीकरण की घोषणा की है जो सब धर्म ग्रंथों की कड़िया मिला कर संसार को एक 'विश्व धर्म दर्शन' देगी। महामति ने उस सत्ता के अवतरण की शुभ सूचना दी, और अपने जीवन में उन सब कार्यों को किया जो उनसे अपेक्षित थे। उनके खुलासा ग्रंथ के दो नामा प्रकरणों का ध्यान से अध्ययन एवं मनन करने से विश्व शान्ति और मानव एकता की राह खुल सकती है।

कठिन साधनाएं आवश्यक नहीं (पृष्ठ—५६)

आत्मा जागृति की ओर बढ़ते हुए साधक कठोर साधनाओं से भयभीत हो जाता है। साधना का अर्थ प्रशिक्षण और अभ्यास है। मन, गुण अंग इन्द्रियों को साधना आवश्यक है परन्तु कठोर यातनाएं देकर हम उन्हें निर्बल एवं अपने शत्रु बना लेते हैं। फिर दिखावे और आडम्बरों में पड़ा मन अहंकार से भर उठता है। महामति ने सुझाया कि प्रियतम को प्रेम से सहज ही रिझा कर मन मन्दिर में प्रतिष्ठित किया जा सकता है।

सबसे सुगम साधन कृष्ण नाम (पृष्ठ—६२)

प्रेम पूर्वक, पूर्ण समर्पण भाव से श्री कृष्ण परमात्मा का एक बार नाम स्मरण अनेक साधनाओं से उत्तम है। जिनके मन में परमात्मा का नाम बस

गया और जो मन में उनके साथ रमण करता है उसका जीवन धन्य हो जाता है।

साधना का विघ्न अहंकार (पृष्ठ—६४)

साधना पथ पर, प्रभु को पाने की राह में अनेक विघ्न आते हैं। अन्य सब तो दिखाई दे जाते हैं अहंकार ही कभी प्रकट कभी छुपे रूप में आक्रमण करता है। इसकी मार से बचना असम्भव है। सद्गुरु की शरण एवं प्रभु कृपा से ही मानव इसके पाश से मुक्त हो सकता है। महामति ने इस शत्रु से सदैव सावधान रहने का आदेश दिया।

आत्मा जागृति की ओर (पृष्ठ—६८)

प्रेम से गुण अंग इन्द्रियों को साध कर, अहंकार के कलुष से मन को पवित्र कर आत्मा मोह निद्रा को छोड़ने का उपक्रम करती है। ऐसे में उसे जगाना सहज जान महामति ज्ञान सूर्य का प्रकाश दिखा कर उसे जागृत करते हैं।

प्रेम का दर्शन (पृष्ठ—७६)

असार संसार के मोह को छोड़ कर विरक्त आत्मा प्रियतम को पाने के लिए लालायित हो उठती है। विरह एवं वैराग्य के सागर में परमात्मा का प्रेम उसके लिए नौका रूप बन कर आता है तथा प्रियतम के उस पार तक सहज ही में ले आता है।

खुदी गुनाह और हुक्म (पृष्ठ—८०)

सहज ही में प्रेम पा कर आत्मा प्रियतम के निकट हो जाती है परन्तु संसार का लगाव कुछ शेष रह जाता है। मोह और अंहकार बार बार आड़े आते हैं। अपने अंहकार का पूर्णतया विसर्जन नहीं हो पाता—दूसरी ओर खुदाइ इल्म-ब्रहन ज्ञान के द्वारा उसे अपने गुनाह भी दिखाई देने लगते हैं। प्रियतम से हठ पूर्वक खेल मांगा, अषने प्रेम की परीक्षा में

असफल रहें, तनिक ज्ञान और प्रेम का आभास मिला तो संसार में उसका प्रदर्शन करने चल दिए। यह अवस्था ऐसी होती है जिसमें रूह प्रियतम का प्रेम परमधाम के अखंड सुखों के साथ प्राप्त करती है और असार संसार की नश्वरता का बोध और असार संसार से थोड़ा लगाव भी शेष रहता है। वास्तव में इसी मनोदशा का अनुभव कराना ही तो सृष्टि रचना का उद्देश्य था। परमात्मा के हुक्म से ही संसार बना। उसकी प्रेरणा से रूहों के ध्यान हुक्म से बनाए पुतलों में केन्द्रित हुए। उनकी आज्ञा में रहकर ही वह नश्वर अविनाशी दोनों के अनुभव प्राप्त करके नश्वर का पूर्णतया त्याग करती है। अब वह प्रियतम के मिलन का आनन्द पाने के सिवा और कुछ नहीं चाहती।

विरहानुभूति (पृष्ठ—८८)

प्रिय से एक क्षण का वियोग भी युगों के समान प्रतीत होता है। प्रियतम परमात्मा की राह में आंखे बिछाए बिरहिन बैठी है। रो रो कर आंसू सूख गए—खाना पीना ऐश्वर्य कुछ नहीं भाता। उसकी श्वास उच्छ्वास से पत्थर भी पिघल गए। विरह के निर्मल जल में नहा कर शुभ्र धवल आत्मा प्रियतम की सेज सुरंगी के योग्य बन जाती है।

संयोग सुख (पृष्ठ—६४)

शुद्ध चेतन आत्मा जब परमधाम में जाग कर प्रियतम का प्रेम प्राप्त करती है तो इस मानव तन को भी, जिसमें उसका ध्यान केन्द्रित था, उस अखंडानन्द का अनुभव प्राप्त होता है। इस प्रकार आत्मा संसार और परमधाम दोनों ठिकाने धन्यता को प्राप्त होती है। इस शरीर में उस अनुभव को पा लेना ही उसकी सार्थकता है। इस जीवन निशा में प्रियतम इस शरीर की सेज पर न आते तो यहां का फेरा व्यर्थ हो जाता।

वाणी मुक्ता

(अर्थ सहित)

।। अनादि प्रश्न समाधान ।।

सुनियो बाणी सुहागनी, हुती जो अकथ अगम ।
सो बीतक कहूं तुमको, उड़ जासी सब भरम ।। १

मुझे मेहेर मेहेबूबें करी, अंदर पड़दा खोल ।
सो सुख सन्मन्धियन सों, कहूं सो दो एक बोल ।। २

मासूकें मोहे मिलके, करी सो दिल दे गुझ ।
कहे तू दे पड़उत्तर, मैं पूछत हों तुझ ।। ३

तू कौन आई इत क्योंकर, कहां है तेरा वतन ।
नार तू कौन खसम को, दृढ़ कर कहो वचन ।। ४

तू जागत है के नींद में, करके देख विचार ।
बिध सारी याकी कहो, इन जिमी के परकार ।। ५

तब मैं पिया सों यों कहया, जो तुम पूछी बात ।
मैं मेरी मत माफक, कहूंगी तैसी भांत ।। ६

मैं न पेहेचानें आपको, न सुध अपना घर ।
पीऊ पेहेचान भी नींद में, मैं जागत हों या पर ।। ७

---

१. क० १—१ २. क० १—४ ३. क० १—५
४. क० १—६ ५. क० १—७ ६. क० १—८
७. क० १—१०

।। अनादि प्रश्न समाधान ।।

हे सौभाग्यवती आत्माओ ! एक अनकही, अनजानी गोपनीय बात सुनो । मैं आपको अपनी आपबीती सुनाती हूं जिससे संसार, आत्मा और परमात्मा के विषय में आपके सभी संशय दूर हो जाएं । १

मुझ पर मेरे प्रियतम ने कृपा करके मेरे अन्तर पट खोल दिए । उससे मुझे जो आनन्द प्राप्त हुआ उसे दो एक शब्दों में अपनी साथी आत्माओं से कहती हूं । २

प्रियतम ने मुझे मिलकर अपने दिल की गुह्य बात प्रकट करके कहा कि मैं जो पूछता हूं उसका उत्तर दो । ३

'तुम' कौन हो ? यहाँ क्यों आई हो ? तुम्हारा घर कहाँ है ? तुम किस स्वामी की अंगना हो ? निश्चित शब्दों में कहो । ४

तुम जागती हो या सो रही हो ? विचार करके देखो । इस संसार, यहाँ के चलन और रीति रिवाज़ों के विषय में विधिवत कहो ।' ५

तब मैंने प्रियतम से कहा कि आपने जो बात पूछी है उसे मैं अपनी बुद्धि के अनुसार कहती हूं । ६

मैं न तो आपको ही जानती हूं न अपने घर का मुझे पता है । बेशक मैं जाग रही हूं तो भी आप मेरे प्रियतम हैं यह ज्ञान मुझे स्वप्नानुभूति की तरह लगता है । ७

मूल बिना ए मण्डल, नहीं नेहेचल निरधार।
निकसन कोई न पावहीं, वार न काहूं पार।। ८

यामें ज्यों ज्यों खोजिये, त्यों त्यों बन्ध पड़ते जाए।
कै उद्दम जो कीजिए, तो भी तिम्मर न छोड़े ताए।।९

इत पन्थ पेड़े के चलहीं, कै भेष दरसन।
ता बीच अंधेरी ज्ञान की, पावे न कोई निकसन।।१०

धरे नाम खसम के, जुदे जुदे आप अनेक।
अनेक रंगे संगे ढंगे, बिध बिध करे विवेक।। ११

खसम एक सबन का, नाहीं दूसरा न कोए।
ए विचार तो करे, जो आप सांचे होए।। १२

ए सुध अजूं किन न पड़ी, बढ़त जात विवाद।
खेल तो एक खिन का, पर जाने सदा अनाद।। १३

ए देखी बाजी छल की, छल की तो उलटी रीत।
इन में सीधा दौड़ के, कोई न निकस्या जीत।।१४

---

८. क० १—२८ ९. क० १—३० १०. क० १—२९
११. क० १४—३३ १२. क० १४—३४ १३. क० १—३२
१४. क० २—६

इस मंडलाकार धरती का मूल नहीं है। यह अस्थिर है और बिना किसी सहारे के टिकी है। इसके भुलावे से कोई मुक्त नहीं हो पाता, क्योंकि इसका कोई ओर छोर नहीं मिलता। ८

इसमें मुक्त होने का उपाय जितना सोचा बन्धन उतने ही बढ़ते गए। कितना प्रयास किया, परन्तु इस अन्धकार से छुटकारा न मिला। ९

(दिशा देने के लिए) यहाँ कई सम्प्रदाय और धर्म मार्ग दिखाई देते हैं जिनके अपने स्वरूप और शास्त्र है। उन सब के संशय युक्त ज्ञान ने मार्ग को धुंधला कर दिया है। कुछ स्पष्ट राह न मिलने के कारण सभी भटक रहे हैं। ज्ञान की उलझनों से निकलना और भी कठिन हो गया है। १०

उन सब ने स्वयं ही स्वामी के अनेक नाम रख छोड़े हैं। उन्हीं नामों के अनुरूप अनेक तरह से योगादि साधनों से ढूंढने और रिझाने के प्रयास चल रहे हैं। ११

स्वामी सबका एक ही है दूसरा कोई है ही नहीं, लेकिन यह विचार तो वही कर सकते हैं जो स्वयं सच्चे और ईमानदार हों। १२

यह स्पष्टीकरण न हो पाने के कारण विवाद बढ़ता जाता है। यह नाटक तो क्षण भर का है परन्तु इसे हमेशा से पैदा हुए और हमेशा रहने वाला मानते हैं। १३

इस विश्व को एक छलना की तरह देखा और छल की रीति ही उलटी होती है। संसार की इस दौड़ में शराफत से कोई विजयी न हुआ। १४

इत जुध किये कै सूरमें, पेहेन टोप सिले पाखर ।
वचन बड़े रन बोल के, उलट पड़े आखर ।। १५

निज बुध आवे अग्याएं, तो लों न छूटे मोह ।
आतम तो अंधेर में, सो बुध बिना बल न होय ।। १६

सृष्टि रचना का कारण

रुहें बे नियाज़ थीं, बीच बका बारे हज़ार ।
जाने नाहीं अरस को, साहेबियां अपार । १

सुध नाहीं दुख सुख की, न सुध विरह मिलाप ।
न सुध बुजरक अरस की, खबर न खाविंद आप ।। २

साहेब बंदे की सुध नहीं, छोटा बड़ा क्योंकर ।
न सुध एक न दोए की, न सांच झूठ खबर ।। ३

---

१५. क० १—३१ १६. क० १—३६
१. खु० १७—४६ २. खु० १७—४७ ३. खु० १७—४८

यहाँ के मोह संग्राम में कई रणवीरों (साधकों) ने कवच और टोपादि (संयम नियम और दूसरी साधनाओं) को धारण करके युद्ध किया। बड़े-बड़े दावे और ऊंची बातें करते रहे परन्तु अन्त में हार कर लौट गए। १५

परमात्मा की बुद्धि (महामति) उनकी आज्ञा से ही आती है। उसके बिना आत्मा में मोह और अज्ञान बना रहता है इसलिए संघर्ष की क्षमता नहीं आती। १६

सृष्टि रचना का कारण

अखंड परमधाम की आत्माएँ आनन्द और प्रेम में मग्न रहने के कारण अन्य सब बातों से निःसंग, अनभिज्ञ और बेपरवाह थीं। उन्हें परमधाम की विशेषताओं, अपनी प्रभुता और वहाँ के ठाट बाट का पता न था। १

एक रस आनन्द-मय वातावरण में रहने के कारण विरोधी भावों जैसे, सुख-दुख, विरह-मिलन आदि का अनुभव नहीं था। परमधाम की श्रेष्ठता, स्वामी की महानता से भी वे परिचित नहीं थीं। २

स्वामी कौन और सेवक कौन ? छोटा बड़ा कैसे होता है ? एक सत्य परमात्मा से ही परिचित होने के कारण वे असत्य और दुई से अनभिज्ञ थीं। ३

न सुध दोस्त न दुश्मन, न सुध नफा नुकसान ।
न सुध दूर नजीक की, न सुध कुफर ईमान ।। ४

तिस वासते खेल देखाइया, ए बात दिल में आन ।
झूठ निमूना देखाए के, रुहों होए हक पेहेचान ।। ५

सांची साहेबी अरस की, कोई नाहीं दूजा और ।
झूठ नकल देखे बिना, न पावे अरस ठौर ।। ६

बिना निमूने न पाइए, क्यों है तफावत ।
कछू दूजी देखे बिना, पाइए न हक सिफत ।। ७

यों जान बीच बका मिने, दिल में ल्याए हक ।
नूर जलाल रुहन को, देखे असल इसक ।। ८

और लिया एह दिल में, जो अरवाहें अरस की ।
दूजी बिना जाने नहीं, हक कैसी है साहेबी ।। ९

---

४. खु० १७—४९ ५. खु० २७—५० ६. खु० १७—५१
७. खु० १७—५२ ८. खु० १७—५३ ९. खु० १७—५४

प्रेममय वातावरण में रहने के कारण शत्रु और मित्र में भेद उन्हें ज्ञात नहीं था। सदा पूर्ण होने के कारण लाभ हानि का अनुभव भी नहीं था। परमात्मा के संग रहने से दूरी निकटता में अन्तर वे नहीं जानती थीं। स्वामी से कुफ्र और दूरी भी हो सकती है यह बात वे सोच भी नहीं सकती थीं। पूर्ण प्रेम ही का अनुभव होने के कारण यह बात उन्हें नई लगी कि प्रियतम पर अविश्वास भी हो सकता हैं तथा श्रद्धा और विश्वास के लिए प्रयास करना पड़ता है। ४

इसलिए, यह बात दिल में लेकर कि, झूठा नमूना दिखा कर आत्माओं को सत्य की पहचान कराई जाए, स्वामी ने रुहों को यह लीला दिखाई। ५

अर्श-परमधाम ही एक हकीवत है उसके बिना दूसरा कुछ है ही नहीं जिसका अस्तित्व स्वीकार किया जाए. झूठी और नकली वस्तु दिखाए बिना इस सत्य का बोध असम्भव था। ६

जो है उससे कुछ अलग, कुछ दूसरा दिखाए बिना अन्तर कैसे ज्ञात हो ? परमात्मा के गुणों को उनके प्रकटीकरण और प्रभाव से उत्पन्न वस्तुओं के बिना कैसे जाना जाए ? ७

(उनके सत्य अंग अक्षर ब्रह्म अपनी कल्पना और ज्ञान के बल पर असंख्य ब्रह्मांड बनाकर मिटा देते थे)। उस नूर जलाल को नूरजमाल स्वामी अपनी रुहों का सच्चा प्यार दिखाना चाहते थे। इस बात को लेकर स्वामी ने यह लीला रचाई। ८

साथ ही यह बात भी उनके मन में आई कि ब्रह्मात्माओं को अपने स्वामी के प्रभुत्व का पता तभी लगेगा जब उन्हें दूसरा कुछ दिखाया जाए। ९

जित दूजी कोई है नहीं, एकै साहेब हक ।
तो तिनको दूजो बिना, कौन जाने बुजरक ।। १०

असल होए जित एकला, और होए नहीं नकल ।
सो नकल देखे बिना, क्यों पाइए असल ।। ११

जित दुख कोई जाने नहीं, होए अकेला सुख ।
ए सुख लज्जत तब पाइए, जब देखिए कछु दुख ।। १२

जित साहेब होवे एकला, न साहेदी दूजे बिन ।
बिना दिए साहेदी तीसरे, क्यों आवे ईमान तिन ।। १३

ए खेल हुआ तिन वासते, हक के हुकम ।
महंमद आया रुहों वासते, ले फुरमान खसम ।। १४

हकें देखाई अरस साहेबी, रुहों को यों कर ।
दुई देखाई झूठ ख्वाब में, पावने पटंतर ।। १५

झूठ निमूना हक को दीजिए, ए कैसी निसबत ।
ए झूठा खेल देखाइया, लेने हक लज्जत ।। १६

अनेक सुख दिए अरस में, सुख फरामोसी नहीं कब ।
हंस हंस गिर गिर पड़सी, ए सुख देखाया अब ।।१७

---

१०. खु० १७—५५ ११. खु० १७—५६ १२. खु० १७—५७
१३. खु० १७—६० १४. खु० १७—६२ १५. खु० १७—६६
१६. खु० १७—७६ १७. परि० ११—७०

जब केवल परमात्मा ही हो और कुछ दिखाई न दे तो वह बड़ा और महान है, यह कैसे पता चले ? १०

जहाँ हकीकत-सत्य-ही हो और नकल या झूठ न हो तो 'यह सत्य है' इसका बोध कैसे हो ? ११

सुख ही हो, दुःख न जाना हो तो जरा सा दुख देख लेने से सुख का स्वाद अधिक आता है। १२

परमात्मा अकेला ही स्वामी है इस बात की साक्षी के लिए उसकी मल्कियत को दिखाना आवश्यक था। तीसरा वह भी कोई हो जिसे साक्षी दी जाए। इसलिए सृष्टा, सृष्टि और दृष्टा तीनों को अलग दिखा दिया। इसके बिना विश्वास कैसे हो ? १३

इन सब कारणों को लेकर परमात्मा के हुक्म से इस सृष्टि की रचना हुई। उनके हुक्म से मुहम्मद साहब कुरान में खुदा का पैग़ाम रुहों के नाम लाए। १४

इस प्रकार स्वामी ने इस स्वप्नवत् संसार में परमधाम की प्रभुता सत्य और झूठ का अन्तर दिखाकर द्वैत का बोध कराया। १५

इस झूठे संसार की तुलना सत्य से की जाए अथवा इसे उस जैसा बताया जाए, यह तो उपहास मात्र है। परमात्मा की सत्ता से परिचय हो तो ऐसा नहीं कह सकते क्योंकि सत्य का बोध असत्य का अस्तित्व नहीं रहने देता। वास्तविकता यह है कि सत्य का आनन्द और स्वाद बढ़ाने के लिए नमूने भर के लिए झूठ को अस्तित्व दिया गया। १६

परमधाम में प्रियतम रुहों को असंख्य आनन्दमय खेल खिलाते हैं परन्तु विस्मृति और, फरामोशी का ऐसा खेल कभी खेला नहीं गया था। इस लीला से उठने के बाद अपनी बेसुध अवस्था के अनुभवों का स्मरण करके आत्माएँ हँसी के मारे लोट पोट हो जाएँगी। १७

आए लैल के खेल में, लेने अरस लज्जत ।
सुख सांचे झूठे दुख में, लेने को एह वखत ।। १८

खसमें ख्वाब देखाइया, बीच अरस अपने इत ।
हक हादी रुहों मिलाए के, उड़ाए दई गफलत ।। १९

ए खेल जरा है नहीं, सब है अरस खसम ।
बैठे इतहीं जागिए, उठो अरस में तुम ।। २०

मोहिनी माया

ए माया छे अति बलवंती, उपनी छे मूल धनी थकी ।
मुनी जन ने मनाव्या हार, शिव ब्रह्मादिक नव लहे पार ।।१

तत्व सहू एणी जीती लीधा, चौदे लोक पोता नां कीधा ।
वली लीधो तत्व मोह, जे थकी उपन्या सहू कोए ।।२

एहना आउध अमृत रूप रस, छल बल वल अकल ।
अगिन कोटिल ने कोमल, चंचल चतुर चपल ।।३

---

१८. खु० १८—४ १९. खु० १८—६ २०. खु० १८—७
१. रा० १—४ २. रास० १—७ ३. रा० १—९

इस जीवन की निशा में काल्पनिक दुखों के बीच सच्चे सुख और परमधाम के आनन्द का अनुभव करने के लिए ही आप इस नश्वर ब्रह्मांड में आए हो। १८

अपने अर्श-परमधाम में बिठा कर स्वामी ने ख्वाब की तरह ज़रा सा दुख दिखाया। स्वामी और प्रियतमा ने रुहों को जगाकर इकट्ठा किया और अज्ञान की निशा मिटा दी। १९

इस खेल, नश्वर ब्रह्मांड का तो अस्तित्व ही नहीं है। जो है वह स्वामी का परमधाम ही है। इस स्वप्न के बीच जाग कर स्वयं को अर्श में देखो। २०

मोहिनी माया

स्वामी की प्रेरणा ही से उत्पन्न होने के कारण माया महान शक्ति शाली है। मुनिजनों से भी इसने हार मनवा ली शिव ब्रह्मा आदि देवता भी इसका पार न पा सके। १

सब तत्वों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश आदि महाभूत तथा सांख्य शास्त्र में कही तन्मात्रा, इंद्रिय, मन चित बुद्धि, अहंकार) को इसने जीत लिया है। चौदह लोक को अपना बसेरा बना लिया। जिस मोह तत्व से सृष्टि की उत्पति हुई उसे भी वशीभूत कर लिया। २

इसके अस्त्र तो देखिए। मीठे वचनों से आकर्षित करती है, सुन्दर रूप के भुलावे में डालती है। मधुर स्वाद का प्रलोभन देती है। छल से, शक्ति से, कुटिलता से और बुद्धि बल से वशीभूत करती है। (आग जैसी जलन, टेढ़ाई, स्पर्श में कोमलता, चंचलता चतुराई और शोखी इसके स्वभाविक गुण हैं। ३

आए लैल के खेल में, लेने अरस लज्जत ।
सुख सांचे झूठे दुख में, लेने को एह वखत ।। १८

खसमें ख्वाब देखाइया, बीच अरस अपने इत ।
हक हादी रुहों मिलाए के, उड़ाए दई गफलत ।। १९

ए खेल ज़रा है नहीं, सब है अरस खसम ।
बैठे इतहीं जागिए, उठो अरस में तुम ।। २०

मोहिनी माया

ए माया छे अति बलवंती, उपनी छे मूल धनी थकी ।
मुनी जन ने मनाव्या हार, शिव ब्रह्मादिक नव लहे पार ।।१

तत्व सहू एणी जीती लीधा, चौदे लोक पोता नां कीधा ।
वली लीधो तत्व मोह, जे थकी उपन्या सहू कोए ।।२

एहना आउध अमृत रूप रस, छल बल वल अकल ।
अगिन कोटिल ने कोमल, चंचल चतुर चपल ।।३

---

१८. खु० १८—४ १९. खु० १८—६ २०. खु० १८—७
१. रा० १—४ २. रास० १—७ ३. रा० १—९

इस जीवन की निशा में काल्पनिक दुखों के बीच सच्चे सुख और परमधाम के आनन्द का अनुभव करने के लिए ही आप इस नश्वर ब्रह्मांड में आए हो। १८

अपने अर्श-परमधाम में बिठा कर स्वामी ने ख्वाब की तरह ज़रा सा दुख दिखाया। स्वामी और प्रियतमा ने रुहों को जगाकर इकट्ठा किया और अज्ञान की निशा मिटा दी। १९

इस खेल, नश्वर ब्रह्मांड का तो अस्तित्व ही नहीं है। जो है वह स्वामी का परमधाम ही है। इस स्वप्न के बीच जाग कर स्वयं को अर्श में देखो। २०

मोहिनी माया

स्वामी की प्रेरणा ही से उत्पन्न होने के कारण माया महान शक्ति शाली है। मुनिजनों से भी इसने हार मनवा ली शिव ब्रह्मा आदि देवता भी इसका पार न पा सके। १

सब तत्वों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश आदि महाभूत तथा सांख्य शास्त्र में कही तन्मात्रा, इंद्रिय, मन चित बुद्धि, अहंकार) को इसने जीत लिया है। चौदह लोक को अपना बसेरा बना लिया। जिस मोह तत्व से सृष्टि की उत्पति हुई उसे भी वशीभूत कर लिया। २

इसके अस्त्र तो देखिए। मीठे वचनों से आकर्षित करती है, सुन्दर रूप के भुलावे में डालती है। मधुर स्वाद का प्रलोभन देती है। छल से, शक्ति से, कुटिलता से और बुद्धि बल से वशीभूत करती है। (आग जैसी जलन, टेढ़ाई, स्पर्श में कोमलता, चंचलता चतुराई और शोखी इसके स्वभाविक गुण हैं। ३

एहनो लागयो कोई एवो खार, मारो केड़ न मूके नार ।
मैं बांध्या सामा हथियार, तो जान्यो जोपे एहनो मार ।।४

मैं मारूं बल जान्यूं, हूं तो छूं अति मूढ़ ।
थाए सर्वे धणी थकी, ते मैं कीधूं दृढ़ ।। ५

एहवो छल करी छेतरी, मन मूल माहें थी फेरी ।
एणे तो आप सरीखो करी, चित चितवणी बहु बिध धरी।।६

मन माहें सबलूं देखे, जाणे माया सुख अलेखे ।
धनी ना सुख न पेखें, विष अमृत लाग्यो बिसेखे ।। ७

एणे निरमूल करी नाखी तमें, हजी जोपे जाणी न थी अमे ।
एहना रमाडया सहू कोए रमे, माहें बंधाना सहू कोए भमे ।।८

माया नी तां एह सनंध, निरमल नेत्रें थइए अंध ।
ते माटे कीधो परकास, तारतम तणो अजवास ।। ९

---

४. रा० १—११ ५. रा० १—२७ ६. रा० १—३२
७. रा० १—३३ ८. रा० १—३६ ९. प्र०गु० ९—१५

यह नारी मुझसे ऐसी डाह करती है कि मेरा पीछा ही नहीं छोड़ती। जब मैंने इसका सामना करने के लिए हथियार उठाए तभी इसके प्रहारों की शक्ति को पहचाना। ४

इसका सामना करके मैंने जान लिया कि मैं कितनी निर्बल और मूर्ख हूँ। अब तो इस बात का मुझे दृढ़ निश्चय हो गया कि स्वामी के किए ही सब कुछ होता है। ५

इसने कपटपूर्ण नीति से मुझे ऐसे छल लिया कि मूल (परमधाम) से मेरा मन हटा दिया। अपने वश में करके मेरे मन में कई तरह के संसारी विचार भर दिए। ६

इसके प्रभाव में तो सभी कुछ बिलकुल सीधा ही दिखाई देता है। ऐसा लगता है कि माया में अपार सुख हैं। स्वामी के आनन्द की ओर दृष्टि जाती ही नहीं। विष अमृत से भी बढ़िया लगता है। ७

आपने इसे निर्मूल कर दिया तो भी हमने इस बात को नहीं जाना। यह जैसा चाहती है वैसा ही नाच नचा रही है। इसके बंधन में बँधे सभी घूम रहे हैं। ८

माया कि रीति तो यह है कि आंखों वाले भी अंधे बने हैं इसलिए (सद्गुरु ने) तारतम ज्ञान की ज्योति जलाकर मन में उजाला किया है। ९

माया मन दज्जाल

क्यों कहूं बल दज्जाल का, जाहेर बड़ा पलीत।
ज़ोर न चले काहू का, लिए जो सारे जीत ।। १

दज्जाल नज़रों न आवहीं, सब में किया दखल।
जाने दोस्त को दुश्मन, कोई ऐसी फिराई कल ।। २

अंदर जो बांधे या बिध, कही जाये न करामात।
सत असत कर देखहीं, असत लाग्या होये सत ।। ३

सूर बड़े इन जहान में, जिन किये सामे बल।
ताबे अपने कर लिये, बाये गले सांकल ।। ४

दुनिया बाहेर देखहीं, अजूं आया नहीं दज्जाल।
बंदगी करते आवसी, तब लड़सी तिन नाल ।। ५

खाय गया सबन को, देखत नाहीं ताय।
तिनसों लड़ने बाहेर, बांध बांध कमरें जायें ।। ६

कहा कहूं बल दज्जाल का, ज़ोर बड़ा जालिम।
पहले पढ़े सब लिये, पीछे छोड़या न कोई आलम ।। ७

---

१. स० ३१—४ २. स० ३१—६ ३. स० ३१—७
४. स० ३१—१३ ५. सा० ३१—२० ६. स० ३१—२१
७. स० ३१—२५

माया मन दज्जाल

दज्जाल स्वरूप मन की शक्ति का परिचय कैसे दूं ? स्पष्ट ही वह बड़ा धूर्त है। इसके सामने किसी का बस नहीं चलता। इसने सब को जीत लिया है। १

यह दज्जाल किसी को दिखाई तो देता नहीं परन्तु मन के रूप में सबमें प्रवेश किए हैं। बुद्धि को यह ऐसे चकरा देता है कि दोस्त दुश्मन दिखाई देता है। २

इस कलियुग रूप दज्जाल की करामात देखिए इसने अन्तर से मन को ऐसे बांध लिया है कि सत्य असत्य प्रतीत होता है और झूठ को ही हमने सत्य मान लिया है। ३

बड़े बड़े शूरवीरों ने इस संसार में इसके सामने सिर उठाया परन्तु इसने सब के गले में सांकल बांध कर अपने आधीन कर लिया। ४

दुनिया के लोग अन्तर में देखना छोड़ बाहर इसके आने की प्रतिक्षा कर रहे हैं। वे कहते हैं कि जब पूजा करते हुए वह हमें गुमराह करने के लिए आएगा तो हम उसके साथ युद्ध करेंगे। ५

दज्जाल ने सब को खाकर अन्तर से खोखला कर दिया है परन्तु अब तक इसकी ओर किसी का ध्यान नहीं गया। लोग बाहर इससे लड़ने के लिए कमर बाँधे तैयार खड़े हैं। ६

दज्जाल की शक्ति कैसे बताऊँ ? यह ज़ालिम बड़ा बलवान है। इसने विद्वानों को ही पहले फँसा लिया, फिर तो ब्रह्मांड में इसकी लपेट से कोई बच न पाया। ७

अमूल्य मानव देह की उपादेयता
'आत्म परिचय'

पेहेले आप पेहेचानो रे साधो, पेहेले आप पेहेचानो ।
बिना आप चीन्हे पार ब्रह्म को, कौन कहे में जानो ।।१

मानखें देह अखंड फल पाइये,
सो क्यों पाए के बृथा गमाइए ।
ए तो अधखिन को अवसर,
सो गमावत मांझ नींदर ।। २

कै कोट राज बैकुंठ के, न आवें इत के खिन समान ।
सो जनम विरथा जात है, कोई चेतो चतुर सुजान ।।३

एक खिन न पाईए सिर साटे,
कै मोहोरों पदमों करोड़ ।
पल एक जाये इन समें की,
कछू न आवे इनकी जोड़ ।। ४

इन समे खिन को मोल नहीं,
क्यों कहूं दिन मास बरस ।
सो जनम खोया झूठ बदले,
पीऊ सों न भई रंग रस ।। ५

---

१. कि० २—१ २. कि० ४—२ ३. कि० ७८—२
४. कि० ७८—३ ५. कि० ७८—४

अमूल्य मानव देह की उपादयता
'आत्म परिचय'

प्रभु की राह पर चलनें वालो ! परमात्मा को पाने से पहले अपनी पहचान करो अर्थात स्वयं को जान लो। अपना परिचय पाए बिना परमात्मा को जान लिया ऐसा कौन कह सकता है ? १

यह मनुष्य देह परमात्मा का अमूल्य उपहार तुम्हें मिला है। इसी में स्वामी को पा लेने की क्षमता है। ऐसा अवसर पाकर उसे व्यर्थ क्यों गंवा रहे हो ? यह जीवन क्षण भंगुर है उसे भी सो कर व्यतीत कर दिया तो अमरत्व और मुक्त सुख के अखंड फल से वंचित रह जाओगे। २

बैकुंठ धाम के राज्य के करोड़ों वर्ष जीवन के क्षण के समान मूल्यवान नहीं हैं। ऐसा अनुपम जीवन व्यर्थ बीता जा रहा है। हे विवेकी, चतुर सयाने मानव चेत जा ! इस जीवन को नष्ट होनें से बचा ले ! ३

सिर देकर अथवा करोड़ों पदमों, मोहरें दे कर भी इस जीवन का बीता क्षण लौटाया या एक क्षण बढ़ाया नहीं जा सकता। इसलिए यदि एक पल भी व्यर्थ चला जाता है तो उससे बड़ी हानि संसार में कोई नहीं है। ४

ऐसे सुअवसर के एक क्षण की तुलना में कोई वस्तु इस संसार की नहीं तो दिन, महीने और वर्षों का मूल्य कैसे आंका जा सकता है ? ऐसा अमूल्य जीवन नश्वर और तुच्छ वस्तुओं के मोह में गंवा दिया। प्रियतम से एक रस होनें का आनन्द न पाया। इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है ? ५

आग परो तिन तेज बल को,
आग परो रूप रंग ।
धिक धिक पड़ो तिन ज्ञान को,
जिन पाया नहीं परसंग ।। ६

सो रे बरस नी जटा बंधानी, ते केम करी खोलाये ।
अंत समे सुरझावी बैठा, ले कांकसी हाथ मांहें ।।७

अरस ल्यो या दुनियाँ, दोनो पाइये न एक ठौर ।
हक खोया झूठ बदले, सुन्या न महंमद सोर ।। ८

दुनिया अपनी दानाई से, लेने चाहें दोये ।
फरेब देने चाहें हक को, सो गये प्यारी उमर खोये ।। ९

सूता होये सो जागियो, जागा सो बैठा होये ।
बैठा ठाढ़ा होइयो, ठाढ़ा पांव भरे आगे सोये ।। १०

६. क० २२—८ ७. कीं० १२६—५६ ८. खु० ५—२४
९. खु० ५—२५ १०. कि० ८६—१८

आग लगे उस सुन्दरता, ओज और शौर्य को तथा धिक्कार है उस ज्ञान को जिसे प्रियतम का स्पर्ष नहीं मिला। ६

जीवन के अन्तिम क्षणों के लिए इस कार्य को छोड़नें वालों को सावधान करते हुए महामति कहते हैं—सौ साल से उलझी जटाएं अन्तिम समय हाथ में कंघी लेकर बैठ जानें से भला कैसे सुलझाई जा सकती हैं ? ७

परमधाम का अमर जीवन अथवा संसार की अनेक योनियों में बार बार भटकना दोनों में से एक को ही चुनना है। दोनों की राहें अलग हैं। नश्वर सुखों के मोह में अविनाशी को खो दिया। *मुहम्मद की दुहाई को न सुना। ८

दुनिया के लोग विद्वता और चतुराई दिखा कर दोनों को एक साथ लेना चाहते हैं। इस प्रकार वे परमात्मा को धोखा देने के असफल प्रयास में अपना प्यारा जीवन बर्बाद कर लेते हैं। ९

समय कम है इसलिए जो सोया है वह जाग जाए, जागनें वाला उठ कर बैठ जाए। बैठा हो वह खड़ा हो जाए। खड़े हुए को चाहिए वह चलने लगे। १०

---

* महंमद परमात्मा के हुक्म और नूर की वह शक्ति है जिसका संसार में मानव को राह दिखाने तथा परमात्मा का संदेश सुनाने के लिए बार बार अवतरण होता है। "ज़माना खाली नहीं, बिना महंमदी कोए" श्रीमद्‌भगवत गीता में श्री कृष्ण ने भी यही घोषणा की कि जब जब धर्म की हानि होती है और अधर्म बढ़ता है 'मैं' धर्म की स्थापना के लिए अवतार लेता हूँ।

यों तैयारी कीजिये, आगूं करनी है दौड़ ।
सब अंग इस्क ले के, निकसो ब्रह्मांड फोड़ ।। ११

क्या बल केहेसी कायर माया को,
जो गए सागर में रल ।
सामे पूर जो चढ़या होसी,
सो केहेसी तिखाई मोह जल ।। १२

कैयों जन्म सुफल किये, ऐसा पीउ का समया पाय ।
सेवा सनमुख जनम लों, लिया हुकम सिर चढ़ाये ।। १३

एक सायत वृथा न गई, धनी किये सनकूल ।
चले चित पर होये आधीन, परी न कबहू भूल ।। १४

सो इत भी होये चले धंन धंन,
धाम धनी कहे धंन धंन ।
साथ में भी धंन धंन होइयां,
याके धंन धंन हुएरात दिन ।। १५

महामत कहें लिया मांग के,
ए धनिएं देखाया छल ।
जो सनमुख रेहेसी धनी धाम के,
सो केहेसी छल को बल ।। १६

---

११. कि० ८६—१६ १२. कि० ७७—१३ १३. कि० ७८—८
१४. कि० ७८—९ १५. कि० ७८—१० १६. कि० ७८—१६

इस तरह शीघ्रता से तय्यार हो जाएं, क्योंकि आगे लम्बी राह पर दौड़ना है और समय कम है। सब अंगों में प्रियतम का प्रेम भरकर ब्रह्मांड के प्रलोभनों और आकर्षण को फोड़कर आगे बढ़ जाना है। (चौदह लोक, शून्य, निराकार के पार प्रियतम के धाम में पहुंचने के लिए ऊंची उड़ान भरनी है।) ११

वह कायर जो लकड़ी के कुन्दे की तरह बह गया वह माया के प्रवाह की तीव्रता क्या बताएगा? बहाव के विरोध का डट कर सामना करने वाला ही इसकी गति को पहचानता है। १२

इस समय की महानता को परख कर जिन्होंने सद्‌गुरु को पहचाना और उनके संग रहे उन्होंने अपना जीवन सफल किया। स्वामी के सम्मुख उनकी सेवा में रहकर, उनके आज्ञापालन में अपने जन्म की कृतार्थता समझी। १३

इस प्रकार स्वामी को अपने अनुकूल करके उनकी प्रसन्नता पा लेने से, उनके जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ न गया। स्वामी की इच्छानुसार उनके आधीन होकर चलने से उनसे कोई भूल न हुई। १४

ऐसे लोग संसार में जन्म लेकर धन्य हुए। स्वामी ने 'धन्य हो' कहा। अपने साथियों में तो वे धन्य हुए ही। उनका सम्पूर्ण जीवन धन्य हुआ। १५

महामति कहते हैं अविनाशी अखंड आनन्दमय परमधाम में रहते हुए अपने प्रेम को परख लेने के लिए इस प्रवंचना मय विश्व को दिखाने की मांग हमने प्रियतम से की। अब इस माया से जूझ कर जो प्रियतम की याद में, उनके सम्मुख रह पाएगा वही इसके बल का परिचय देगा और इसके पाश से मुक्त होने का आनन्द लूट सकेगा।।

कर्म कांड ही धर्म नहीं है

ए माथे लेसे तेणे कहूं छूं, बीजा मा करजो दुख
तमें तमारी माया माहें, सेहेजे भोगवजो सुख ॥ १

धनी न जाए किनको धूत्यो, जो कीजे अनेक धुतार।
तुम चेहेन ऊपर के कै करो, पर छूटे न क्योंए विकार ॥ २

कोई बढ़ाओ कोई मुंडाओ, कोई खेंच काढ़ो केस।
जो लों आतम न ओलखे, कहा होए धरे बहु भेस ॥ ३

कोई कहे पारब्रह्म बड़ा, कोई कहे पुरुषोतम।
वेद के बाद अंधकारे, यों करें लड़ाई धरम ॥ ४

जाहेर झूठा खेलहीं, हिरदे अति अंधेर।
कहें हम सांचे और झूठे, यों फिरे उलटे फेर ॥ ५

---

१. कि० १२६—३१ २. कि० १५—१ ३. कि० १५—२
४. सनंध १५—१७ ५. सबंध १५—१८

कर्म कांड ही धर्म नहीं है

जो सिर लेना चाहें—समझ कर राह पर आना चाहें—उन्हीं के लिए कहा है। दूसरों को दुखी होने की आवश्यकता नहीं। संसार के क्षणिक सुखों में जिन्हें रस आ रहा है वे उसी में मग्न रहें। १

अनेक आडम्बर रच कर, दिखावे के आचरण से प्रभु धोखे में आने वाले नहीं। कुछ बाह्य चिह्न लगा कर धार्मिक कहला लेने से कोई धार्मिक नहीं बन सकता और न ही मन के विकार ही छूटते हैं। २

(साधना पथ पर चलने से पूर्व प्राय: कोई न कोई वेष लेने का रिवाज है।) स्वामी जी कहते हैं :—जटाएं बढ़ा कर सिर मुंडा कर अथवा बालों को लोच कर साधु कहला सकते हो परन्तु जब तक आत्मा की पहचान न हो वेष लेने से क्या होता है ? ३

परमात्मा के असंख्य गुणों के कारण उनके अनेक नाम रख कर लोग विवाद करते हैं। कोई कहता है पारब्रह्म बड़ा है तो कोई पुरुषोत्तम को बड़ा बताता है। वेद के वाक्यों में प्रतिपादित अनेक नामों को लेकर अज्ञान में पड़े तथाकथित धर्म ही लड़ने का कारण बने हुए हैं। ४

साधारणतया मन में छिपे कलुष को लोगों की नज़रों से बचाने के लिए लोग धार्मिकता का ढोंग रच लेते हैं। स्वयं को सच्चा सिद्ध करने के लिए दूसरों को झूठा घोषित करते हैं। इस झमेले में पड़े वे अनेक कुचक्र रचा करते हैं। ५

अस्नान करी छापा तिलक देओ,
कंठ आरोपो तुलसीमाल ।
ग्नानी कहाग्रो साध मंडली,
पण चालो छो केही चाल ॥ ६

एक जीव ने ग्राहार देवरावे,
तेमा अनेक जीव संघारे ।
एणी पेरे दान करे रे दया सूं,
ए धरम ते कां नवतारे ॥ ७

दान करे सहू देखा देखी, बांधे ते करम अनेक ।
मन तणी आंकड़ी न लाधे, तेणे बंध बंधाए वसेक ॥ ८

क्रोध अहंमेव समे नहीं, अने वेस धरो छो साध ।
लोभ लज्जा नमे नहीं, मांहे मोटी ते ए व्राध ॥ ९

दुस्ट थई अवगुण करे, ते जई जमपुरी रोए ।
पण साध थई कुकरम करे, तेणूं ठाम न देखूं कोए ॥ १०

---

६. कि० १२८—१२ ७. कि० १२६—२० ८. कि० १२६—२४
९. कि० १२८—८ १०. कि० १२८—७

स्वामी जी ऐसे ढोंगी लोगों से कहते हैं कि बार बार स्नान करके तिलक आदि लगा लेते हो, शरीर पर गोंदने से पवित्रता के चिन्ह छपवा लेते हो, ज्ञानमय प्रवचन करके साधुओं की मंडलियों में तत्ववेत्ता कहलाते हो परन्तु अपने आचरण पर कभी ध्यान नहीं जाता। देखो तो किस राह पर चल रहे हो ? ६

एक अपने जीव (शरीर) को आहार देने के लिए कई जीवों का शोषण और हत्या करते हो। बाद में उन पर दया दिखाकर कुछ सेवा कार्य कर लेते हो। परन्तु ध्यान रहे, हिंसा द्वारा किए धर्मकार्य से कभी किसी का उद्धार नहीं हो सकता। ७

दूसरों की देखा देखी धर्मात्मा और दाता कहलाने के लिए दान करते हो तो प्रशंसा की कामना में कर्म बन्धन में बंध जाते हो। संसार के प्रलोभनों में फंसे मन की निवृति का साधन न कर पाने के कारण उसे दृढ़तर बन्धनों में बाँध देते हो। ८

क्रोध और अभिमान तो समाता नहीं और वेष साधु का ले लेते हो। तुच्छ वस्तुओं का लोभ और मोह छूटता नहीं, उनका संग्रह करने में लज्जा नहीं आती, किसी के आगे झुकना भला नहीं लगता नम्रता का नाम तक नहीं। यही तो मन के महा रोग हैं, जिनसे मुक्त हुए बिना शान्ति नहीं मिलती। ९

दुष्ट और पापी व्यक्ति बुरे काम करके यमपुरी में जाता है और कुकर्मों के फलस्वरूप यातनाएं पाकर रोता है। परन्तु कभी सोचा है कि जो साधु कहला कर पाप करता है उसको क्या दंड मिलेगा ? उसे भला कहाँ ठिकाना मिलेगा ? १०

माहें अंधेर और वैस्नव कहावो,
ए तो बातें सब फोक।
ज्यों धूरत नाम धरावे धंनवंत,
पासे नहीं दमड़ी रोक ॥११

कुफर न काढ़ें आपको, और देखें सब कुफरान।
अपना अवगुण न देखहीं, कहें हम मुसलमान ॥ १२

बदी न छोड़ें एक पल, डर न रखें सुभान।
फैल करें चित चाहते, कहें हम मुसलमान ॥ १३

बाहेर देखावें बंदगी, माहें करें कुकरम काम।
महामत पूछें ब्रह्मसृस्ट को, ए बैकुंठ जासी के धाम ॥१४

अब तो कछुए न देखत मद में,
पर ए मद है पलमात्र।
महामत दिवाने को कहा न माने,
सो पीछे करसी पछताप ॥ १५

---

११. कि० १३—१० १२. सनंध ४०—४३ १३. स० ४०—४५
१४. कि० १०५—१४ १५. कि० २०—११

मन का भ्रम न मिटे, वासनाओं में पूर्णतया रमण करने वाला व्यक्ति वैष्णव कहलाने लगे। यह बात तो वैसे ही सारहीन है जैसे कोई कंगला धूर्त अपना नाम लक्ष्मीपति रख ले और पास में फूटी कौड़ी भी न हो। ११

ईमानदार मुसलमान कहलाने वाले व्यक्ति अपने मन का पाप और अवगुण तो देखते नहीं, दूसरों को काफिर (पापी) कहते है। १२

अपराध करने से बाज़ नहीं आते, खुदा से डरते नहीं। मनमाने कर्म करते हैं और फिर कहते हैं हम दीनदार मुसलमान (धर्मात्मा) हैं। १३

महामति पूछते हैं, "हे ब्रह्मात्माओ जो लोग दिखावे के लिए बंदगी और पूजा इत्यादि करते हैं और दूसरों की नज़र चुरा कर कुकर्म करते हैं क्या ऐसे लोग चाहने भर से बैकुंठ या परमधाम जा सकते हैं?" (स्पष्ट ही यमपुरी-दोज़क-के सिवा उनका कोई ठिकाना नहीं) १४

इस समय तो धन, बल, रूप और यौवन के नशे में उन्हें कुछ दिखाई नहीं देता परन्तु यह मस्ती पल भर की है। संसार की नज़रों में दीवानें-महामति-की बात सुन कर भी जो नहीं चेतेगा उसे बाद में अवश्य ही पछताना पड़ेगा। १५

वैष्णव की पहचान

हो भाई मेरे, वैष्नव कहिए वाको,
निर्मल जाकी आतम ।
नीच करम के निकट न जावे,
जाए पेहेचान भई पारब्रह्म ।। १

इस्क लगाए पिया सों पूरा,
खेले अबला होए अहिनिस ।
ओ अंधे अज्ञानी भरम में भूले,
पर या ठौर प्रेम को रस ।। २

जब वैस्नव अंग किये री अप्रस,
और कैसी अप्रसाई ।
परस भयो जाको पुरुषोतम सों,
सो बाहेर न देवे देखाई ।।३

बेहद वाटें कपट चाले नहीं,
राखिए नहीं रजमात्र ।
जेने आवो रे तेतो पहले आगमी,
पछे ने करूं प्रेम ना पात्र ।। ४

---

१. कि० ९—१ २. कि० ९—२ ३. कि० ९—४
४. कि० ६७—८

वैष्णव की पहचान

अरे ओ मेरे भाई! वैष्णव उसे ही कहना चाहिए जिसकी आत्मा निर्मल हो। शुद्ध आत्मा वाले व्यक्ति को ही परमात्मा की पहचान हो सकती है। फिर वह नीच कर्मों के निकट ही नहीं जाता। १

प्रियतम से पूरेपन से प्रेम करे। पतिव्रता स्त्री की तरह पूर्ण समर्पण भाव से उनसे रमण करे। ज्ञान के मद में अँधे, अज्ञानी जन इस रहस्य को न समझने के कारण भ्रम में हैं कि अन्य उपायों से भी उन्हें रिझाया जा सकता है। वह तो प्रेममयी भूमिका है। प्रेम से ही वहाँ पहुंचना सम्भव है। २

प्रियतम का स्पर्ष मिलनें से वैष्नव पिंड ब्रह्मांड से ऊपर उठ जाता है। जब देह का आभास ही नहीं रहता तो फिर छूआछूत किससे ? वह तो फिर बाह्य दृष्टि छोड़, अन्तर दृष्टि से दूसरों के अन्तःकरण को परखता है। ३

बेहद-असीम-की उड़ान भरते हुए छल कपट आदि से मुक्त, सर्वथा निर्भार, होना पड़ता है। इस राह पर जिसे आना हो वह पहले पूर्णतया निर्दोष और समर्पित होकर आजाए तो फिर मैं उसे प्रेम रस से भर दूं। ४

ओतड़ दीसे रे अति धणूं दोहेली,
हाथ न थोभे रे पाए ।
काम नहीं इहां कायर तणूं,
सूरें पूरे घायलें लेवाए ।। ५

सतव्रत धारण सूं पालिए, जहां लगे ऊभो देह ।
अनेक विघन पड़े जो माथें, तोहे न मूकिये पिऊ नेह ।।६

दान दया सेवा सर्वा अंगे, कीजे ते सर्वे गोप ।
पात्र ओलखी ने कीजे अरचा, सास्त्रअर्थ जोइये जोप ।।७

असुभ करम जेम लिए निंदया,
सुभ करम नाम ना लेई जाए ।
गोप साधन कीजे ते माटे,
जेम सुख जीवने पोहोतूं थाए ।। ८

तीरथ ते जे एक चित कीजे, करम न बांधिए कोए ।
अहेनिस प्रीतें प्रेम सूं रमिए, तीरथ एणी पेरे होए ।। ९

जो कोइ देत कसाला तुमको, तुम भला चाहियो तिन।
सरत धाम की न छोड़ियो, सुरत पीछे फिराओ जिन।।१०

---

५. कि० ६७—४ ६. कि० १२६—२६ ७. कि० १२६—२७
८. कि० १३१—१४ ९. कि० १२६—२३ १०. कि० ८६—१६

वह राह तो भयानक और दुर्गम है। उबड़ खाबड़ इतनी कि कहीं हाथ पाँव टिकानें की जगह नहीं। कायर लोग उस पथ के पथिक नहीं बन सकते। शूरवीर ही कठिनाइयों के प्रहार झेल पाते हैं। ५

(निष्कलंक जीवन के लिए) सत्य का व्रत दृढ़ धारणा से लो और जहाँ तक शरीर में प्राण हैं सत्य की रक्षा करो। असंख्य विघ्न बाधाएँ आने पर भी प्रियतम का प्रेम मन से निकलनें न दो। ६

दान, दया, सेवा, सर्वांगीण-तन, मन, धन से हो परन्तु गुप्त हो। दिखावे के लिए न हो। शास्त्रों-धर्म ग्रन्थों-की चर्चा भी पात्र देखकर श्रद्धावान व्यक्ति से ही करो। ७

अशुभ कर्मो से जिस प्रकार निंदा होती है शुभ कर्म प्रशंसा का पात्र बनाते हैं। दोनों में कर्म फल रहने से जन्म मरण का बन्धन नहीं छूटता। इसलिए निष्काम भाव से गुप्त साधन कीजिए जिससे जीव को मोक्ष की प्राप्ति हो। ८

तीर्थ तो चित को एकाग्र करना ही है। कर्मों में अपने को न बाँधिए। दिन रात जहाँ प्रियतम से रमण हो तीर्थ वहीं बन जाता है। ९

जो कोई तुम्हें पीड़ा दे, उसका भी तुम भला चाहो। परमधाम में अपने किए वादे को न भूलो। प्रियतम में लगा मन संसार में भटकनें न दो। १०

ज्यों ज्यों गरीबी लीजे साथ में,
त्यों त्यों धनी को पाइए मान ।
इत दोए दिन का लाभ जो लेना,
एही वचन जानो परवान ।। ११

जैसा बाहेर होत है, जो होए ऐसा दिल ।
अधखिन पीऊ न्यारा नहीं, माहें रहो हिलमिल ।। १२
घरही में न्यारे रहिए, कीजे अन्तर में बास ।
तब गुण बस आपे होवहीं, गयो तिमर सब नास ।। १३
जो मांहे निरमल बाहेर दे न दिखाई,
वाको पारब्रह्म सों पेहेचान ।
महामत कहें संगत कर वाकी,
कर वाही सों गोष्ट ग्यान ।।१४

दीनदार मुसलिम

कहो कलमा हक कर, ल्यो मायने कुरान ।
पाक दिल रुह पाक दम, या दीन मुसलमान ।। १
कसनी लेवे आप सिर, साफ रोजे रमजान ।
रात दिन याही जोस में, या दीन मुसलमान ।। २

---

११. कि० ८६—१२ १२. कि० १३२—४ १३. कि० ३५—२७
१४. कि० २७—७
१. सनंध २१—११ २. स० २१—१३

अपनी साथी आत्माओं में जितने नम्र और दीन बनोगे साहिब के उतने ही प्रिय और सम्मानित बन जाओगे। इस नश्वर संसार के दो दिन के जीवन का सही लाभ लेना हो तो मेरे इन्हीं वाक्यों को प्रमाणित समझो। ११

जैसे बाहर से दिखाई देते हो, यदि मन भी उतना ही निर्मल हो, तो आधा क्षण भी प्रियतम को, अपने से, अलग न पाओगे। अन्तर में ही उनसे मिलन हो जाएगा। १२

अन्तर में पैठना हो जाए तो इस माया की दलदल में कमल सदृष्य निःसंग रह पाओगे। तब गुण अंग इन्द्रिय स्वयं ही, सहज रूप में सखा बन जाएँगे और अज्ञान अंधकार का नाश हो जाएगा। १३

ऐसे निर्मल-अन्तःकरण परन्तु दिखावे से दूर रहने वाले व्यक्ति को ही पारब्रह्म परमात्मा की पहचान होती है। महामति कहते हैं उसी की संगत में रहो। ज्ञान चर्चा भी उसी से करो। १४

दीनदार मुसलिम

हे मुसलमानो, सच्चाई से हकीकत समझ कर कलमा कहो तथा कुरान के बातिन-अभिप्रेत अर्थ समझो। शुद्ध मन, पवित्र आत्मा और निष्कलंक जीवन वाला ही धर्मनिष्ठ मुसलमान है। १

अपने आप को कसौटी पर परखता रहे। जिसके रोज़े और रमज़ान पवित्रता से पूर्ण हों। रात दिन अपने आप को पवित्र रखने के जोश में रहे, वही दीनदार मुसलमान है। २

ए सब खेल खसम का, बुनी आदम हैवान ।
एकै नजरों देखहीं, या दीन मुसलमान ।। ३

भली बुरी किनकी नहीं, डरता रहे सुभान ।
सोहोबत खूनी की न करे, या दीन मुसलमान ।। ४

मेहेर दिल मोमन, इश्क अंग रेहेमान ।
दाग़ न देवे बैठने, या दीन मुसलमान ।। ५

साफ रखे सब अंगों-ज्यों छींट न लगे गुमान ।
बांधे दिल गरीबी सों, या दीन मुसलमान ।। ६

जो अंदर झूठी बंदगी, देखलावें बाहेर ।
तिनको मुसलिम जिन कहो, वह ख्वाबी दम जाहेर ।। ७

दिल पाक जोलों होए नहीं, कहा वजूद ऊपर से धोये ।
धोए वजूद पाक दिल, कबहूं हुआ न कोए ।। ८

पाक हुआ दिल जिनका, वजूद जामा पाक सब ।
हिरस हवा सब इन्द्रियों, तिन नहीं नापाकी कब ।। ९

खाना पीना दीदार, रोजा निमाज दीदार ।
एक दोस्ती जाने हक की, दुनी सब करी मुरदार ।।१०

---

३. स० २१—२० ४. स० २१—२२ ५. स० २१—२५
६. स० २१—२८ ७. स० २१—३५ ८. स० २१—४०
९. स० २१—४१ १०. स० २२—४३

इस संसार को मालिक की लीला समझे। उसमें पैदा किए गए मानव पशु आदि सब जीवों को एक ही नज़र से देखे, वही सच्चा मुसलमान है। ३

दूसरों की भली बुरी चर्चा-निंदा स्तुति-में न पड़कर परमात्मा का खौफ़ मन में रखे। हत्यारे और पापी लोगों की संगत में न रहे वही दीनदार मुसलमान है। ४

मोमिन का मन दया से पूर्ण होता है। उसके अंग अंग में कृपालु परमेश्वर का प्यार भरा रहता है। अपने मन, प्राण तथा जीवन में दाग़ ठहरने न दे, वही सच्चा मुसलमान है। ५

अपने सब अंगों को इस तरह बचा कर स्वच्छ रखे कि उनमें अभिमान का छींटा भी लगने न पाए। दीनता से जिसका मन काबू में रहे, वही दीनदार मुसलमान है। ६

जिनकी पूजा उपासना केवल दिखावे भर के लिए, झूठी ही होती है उनको मुसलमान न कहो। वे तो स्पष्ट ही माया के पुतले दज्जाल के गुलाम हैं। ७

जब तक मन पवित्र नहीं होता स्नानादि करने से क्या होता है? शरीर के धोने से कभी किसी का मन शुद्ध नहीं हुआ। ८

जिनका मन निर्मल हो जाता हैं, उनका शरीर और पोशाक पवित्र ही होती है। तृष्णा, मोह और लोभ उनसे दूर रहते हैं। इन्द्रियों के विषयों में रस न रहने से अपवित्रता उन्हें छू भी नहीं पाती। ९

ऐसे दीनदारों के लिए खुदा का दीदार ही खाना, पीना, व्रत उपासना बन जाता है। वे केवल परमात्मा से ही मित्रता रखते हैं। संसार के प्रलोभनों को मृतप्राय समझते हैं। १०

ए तो पातसाही दीन की, सो तो गरीबी से होए।
और स्वांत सबूरी बिना, कबहूं न पावे कोए ॥११

महामत कहें ईमान इस्क की,
सुकर गरीबी सबर।
इन बिध रहें दोस्ती धनी की,
प्यार कर सके त्यों कर ॥१२

जाति भेद विचार

जात एक खसम की, और न कोई जात।
एक खसम एक दुनिया, और उड़ गई दूजी बात ॥ १

सब जातें नाम जुदे धरें,
सबका खाविंद एक।
सबको बंदगी याही की,
पीछे लड़ें बिना पाए विवेक ॥ २

लड़ फिरके जुदे हुए, हिन्दू मुसलमान।
और खलक केती कहूं, सबमें लड़े गुमान ॥ ३

---

११. कि० ९५—१२ १२. कि० १०२—१२
१. स० ३६—१७ २. खुलासा २—२२ ३. खु० १०—१०

यह तो धर्म का साम्राज्य है जो केवल दीनता से ही मिलता है। शान्ति और धैर्य के बिना कभी किसी को नहीं मिला। ११

महामति कहते हैं : हे आत्माओ, विश्वास और प्रेम से, कृतज्ञता, दीनता और सन्तोष में रहते हुए स्वामी की मित्रता के अधिकारी बनो और उनसे जैसे भी बन पाए प्रेम करो। १२

जाति भेद विचार

व्यक्तित्व और सत्ता केवल परमात्मा की ही है। और किसी का अस्तित्व ही नहीं है तो फिर बड़े और छोटे का भेद ही कहाँ रह जाता है? एक स्वामी ही की सत्ता है। स्वामी के अतिरिक्त जो कुछ भी दिखाई देता है वह उन्हीं की माया से बना विश्व है। इसके सिवा और कुछ नहीं। १

इस मायाजन्य संसार में सब लोगों ने अपने आप को जातियों में बाँट कर अलग अलग नाम रख लिए हैं परन्तु वे सब भूल जाते हैं कि सब का स्वामी एक ही है। सब उसी की उपासना करते हैं फिर भी बिना सोचे समझे परस्पर झगड़ते हैं। २

हिन्दू मुसलमान परस्पर लड़ झगड़ कर अलग हो गए हैं। इनके अतिरिक्त भी जगत में कितने सम्प्रदायों के लोग हैं जिनमें केवल अभिमान के कारण ही संघर्ष हो रहा है। ३

ब्राह्मण कहें हम उत्तम, मुसलमान कहें हम पाक ।
दोउ मुट्ठी इक ठौर की, इक राख दूजी खाक ॥ ४

चंडाल हिरदे निरमल, खेले संग भगवान ।
दिखलावे नहीं काहू को, गोप राखे नाम ॥ ५

विप्र वेष बाहेर दृष्टि, षट करम पाले वेद ।
स्याम खिन सुपने नहीं, जाने नहीं ब्रह्म भेद ॥ ६

अब कहो काके छुए, अंग लागे छोत ।
अधम तम विप्र अंगे, चंडाल अंग उद्योत ॥ ७

छोड़ सगाई रुह की, करें सगाई आकार ।
वैराट कोहेड़ा या बिध, उलटा सो कै परकार ॥ ८

मायना ऊपर का सबों लिया,
और लिया अहंकार ।
फिरके फिरें सब हक से,
बांधे जाए कतार ॥ ९

जात भेष ऊपर के,
ए सब छल की जहान ।
जो न्यारा मांहें बाहेर से,
तुम तासों करो पेहेचान ॥ १०

---

४. स० ४०—४२ ५. स० १६—१८ ६. स० १६—२१
७. स० १६—२३ ८. स० १६—१६ ९. खु० १०—११
१०. स० २९—५ ।

ब्राह्मण अपने आपको सर्वश्रेष्ठ मानते है और मुसलमान कहते हैं हम पवित्र हैं। परन्तु दोनों का अस्तित्व एक ही ठिकाने मुट्ठी भर राख या खाक में परिणित हो जाएगा। ४

चाँडाल अपनी तुच्छ जाति और नीच व्यवसाय का अभिमान न कर पाने के कारण मन से निर्मल होता है। अपनी दीनता के कारण ही वह भगवान का प्रिय बन कर उनसे रमण करता है। वह दिखावा नहीं करता और छिप कर परमात्मा का नाम लेता है। ५

ब्राह्मण की दृष्टि आकार पर होती है। उच्च जाति का उसे अभिमान रहता है। वेदों में वर्णित छ: प्रकार के कर्म, यज्ञ, शिक्षा और दानादि दिखावे के लिए करता है। स्वप्न में भी वह परमात्मा का ध्यान नहीं कर पाता तो उनका रहस्य कैसे जान सकता है ? ६

अब आप ही बताएँ कि किसे छूने से छोत लगती है ? स्पष्ट ही बाह्य दृष्टि वाला ब्राह्मण अधम है और निर्मल मन वाला चांडाल कांतिमान है। ७

संसार के लोग आत्मा को छोड़ शरीर से ही सम्बन्ध जोड़ते हैं। समस्त ब्रह्मांड में इसी तरह की अनेक उल्टी सीधी उलझन भरी बातें हैं। ८

धर्म ग्रन्थों को पढ़ा भी तो सबने उसके बाह्य-शब्दार्थ भर ही समझे। इस अधूरे ज्ञान के अहंकार से भरे सभी मत मतान्तर सत्य को छोड़ बैठे हैं और लकीर को पीटते चले जा रहे हैं। ९

ऊपरी जातियां और वेष सब इस मायावी संसार के भुलावे हैं। सत्य को चाहने वालो, पिंड और ब्रह्मांड से अतीत, स्वामी को पहचानो। १०

सब कहें वजूद एक है, और सबमें एकै दम ।
सब कहें साहेब एक है, पर सबकी लड़े रसम ।। ११

छोड़ गुमान सब मिलसी, ए जो सकल जहान ।
जात पांत न भांत कोई, एक खान पान एक गान ।।१२

कहनी करनी रहनी

केहेनी करनी चलनी,
ए होंएं जुदियां तीन ।
जुदा क्या जाने दुनि कुफर की,
और ए तो इलम आकीन ।। १

कदी केहेनी कही मुख से,
बिन रेहेनी न होवे काम ।
रेहेनी रुह पोहोंचावहीं,
केहेनी लग रही चाम ।। २

---

११. खु० १०—१२ १२. स० २७—२४ ।

१. कियामतनामा छोटा० १—५७ कि० छो० १—५५

सब लोग जानते हैं कि शरीर सबका एक जैसा है और सबमें एक ही तरह का जीव है। यह भी स्वीकार करते हैं कि सबका स्वामी एक है फिर भी अलग रीति रिवाज़ों के कारण झगड़ रहे हैं। ११

इस तथ्य को पहचान कर, अभिमान छोड़ जगत के सभी लोग गले मिलेंगे। तब जाति पाँति और तरीके अलग न रहेंगे। सब का खाना पीना और बोल एक जैसा हो जाएगा। १२

कहनी करनी रहनी

यह माया जन्य लोग क्या जानें कि यदि कहने, करने और आचरण में अन्तर हो तो क्या होता है? सत्य ज्ञान और परमात्मा में पूर्ण विश्वास से ही यह अन्तर मिटता है। १

कभी मुंह से कह भी दिया परन्तु किया न जाए तो क्या हो सकता है? आचरण से आत्मा परमधाम में पहुँचती है परन्तु कथन शरीर तक ही रह जाता है। २

केहेनी सुननी गई रात में,
आया रेहेनी का दिन ।
बिन रेहेनी केहनी कछुए नहीं,
होएं जाहेर अरस बका वतन ।। ३

गुम हुई जिनो की अकलें,
होय नजीक न तिनो हक ।
जान बूझ न छोड़ें इन जिमी.
तिनसे रेहनी न होए बेसक ।। ४

मर मर सब कोई जात है,
चाहिये मोमनों मौत फरक ।
दुनिया बीच गफलत के,
मोमन जागे दिल अरस हक ।। ५

पाक न होइये इन पानिएं,
चाहिए अरस का जल ।
न्हाइये हक के जमाल में,
तब होइये निरमल ।। ६

---

३. कि० छो० १—५६ ४. कि० छो० १—५४ ५. कि० छो० १—६४
६. सि० २५—४४

जब तक मारफत ज्ञान का सूर्य उदय नहीं हुआ था और अज्ञान की रात छाई थी तो लोग, कह सुनकर बैठ रहे, किया कुछ नहीं। अब तो कहे अनुसार जीने के दिन आ गए हैं। आचरण के बिना कहना किस काम का ? रहनी ही से परमात्मा के द्वार खुले हैं (परमधाम की राह खुलती है)। ३

मतिहीन लोग सत्य और परमात्मा से दूर हो जाते हैं। ऐसे लोग जानबूझ कर संसार को छोड़ना नहीं चाहते इसलिए उनका आचरण शुद्ध हो ही नहीं सकता। ४

मरते सब हैं, परन्तु मोमिनो की मृत्यु तो अलग होनी ही चाहिए। संसारी लोग मर कर जन्म जन्मांतर तक अन्धकार में भटकते हैं परन्तु मोमिन अरश दिल में जागते हैं। ५

संसार के जल से पवित्रता नहीं आती। अर्श परमधाम के प्रेम में सराबोर होकर ही मन का कलुष मिटता है। परमात्मा के सौंदर्य सागर में गोता लगाने से पाकीज़गी (शुद्धता) आती है। ६

जो लों जाहेरी अंग मरें नहीं,
तोलों जागे न रुह के अंग ।
ए मजकूर रुह अंग होवहीं,
अपने माशूक संग ।। ७

ए बातें याद राखियो,
फल वखत आखरत ।
चलते फरक जो न होवहीं,
तो रुहों की क्यों करे हक सिफत ।। ८

महामत कहें मोमन की, मिट गई दुनियां चाल ।
जागिए हक दिल अरस में, तो अबहीं बदले हाल ।। ९

---

७. सि० २५—६६ ८. कि० ना० छो० १—९३ ९. स. ३६—७४

जब तक बाह्य दृष्टि रहती है और मानव शरीर की ही साधना होती रहती है तब तक आत्मा के अंग जागृत नहीं होते। परमात्मा से मिलन और चर्चा तो रुह के अंगों से ही सम्भव है। ७

जीवन की अन्तिम वेला में अथवा कियामत के समय अपने कर्मों का लेखा जोखा होगा। इस बात को ध्यान में रख कर ही जीना चाहिए। जैसा आचरण होगा वैसा ही फल मिलेगा। यदि चलन में अन्तर न होता तो स्वयं परमात्मा शुद्ध आत्माओं की प्रशंसा क्यों करते? ८

महामति कहते हैं कि मोमिनो ने संसार के लोगों के जैसा व्यवहार करना छोड़ दिया है। जागने पर जिसका मन परमात्मा का धाम बन जाता है, उसका आचरण स्वयं ही बदल जाता है। वह सहज ही शुभ की ओर प्रेरित हो जाता है। ९

महामति-बुद्ध निष्कलंक–इमाम मेहदी

निजनाम सोई जाहेर हुआ,
जाकी सब दुनी राह देखत।
मुक्त देसी ब्रह्मांड को,
आए ब्रह्म आतम सत ॥ १

जब हक हादी जाहेर भए, और अरस उमत।
सब किताबें रोसन भईं, उगी फजर मारफत ॥ २

कहे काफर असुर एक दूसरे, करत लड़ाई मिल।
फुरमान जब रोसन भया, तब पाक हुए सब दिल ॥ ३

ए कागद उमत ब्रह्म सृष्ट का,
सब सोभा आई तिन पास।
मायने इन रोसन किए,
तब झूठे भए निरास ॥ ४

जाको दिल जिन भांत सों, तासों मिले तिन बिध।
मन चाहया सरूप होए के, कारज किए सब सिध ॥ ५

वेदान्त गीता भागवत, दैंया इसारतां सब खोल।
मगज मायने जाहेर किए, माहें गुझ हते जो बोल ॥ ६

---

१. कि० ७६—१   २. खु० १३—९९   ३. खु० १३—१००
४. खु० १३- ९८   ५. खु० १३—९४   ६. खु० १३—९६

महामति-बुद्ध निष्कलंक–इमाम मेहदी

ज़माना जिसकी बाट देख रहा है, परमात्मा का वह नित्य नाम और धाम प्रकट हुआ है। यह नाम समस्त संसार को मुक्ति देने वाला है। हे सत्य आत्माओ अपने धाम चलो। १

परमात्मा, उनकी आनन्द अंग श्यामा और ब्रह्म आत्माएँ अवतरित हुईं। स्वयं रुह अल्लाह ने सद्गुरु का वेष लिया तो समस्त धर्म ग्रन्थों के प्रकाशित होने से मारफत ज्ञान की सुव्ह हुई। धर्म ग्रन्थों की हकीकत खुलने से भ्रान्तियाँ नहीं रहीं। २

धर्म का मर्म न समझने के कारण ही मुसलमान दूसरों को काफिर और हिन्दू अन्य लोगों को असुर कह कर परस्पर झगड़ते रहे। परमात्मा का पैग़ाम देने वाले कुरान और भागवत आदि ग्रन्थों का रहस्य खुल गया तो दुविधा दूर होने से सबके मन निर्मल हुए। ३

सभी धर्म ग्रन्थ ब्रह्मसृष्टि के लिए उनके प्रियतम का संदेश देते हैं। सबमें उनकी ही शोभा की चर्चा है। उनके रहस्य खुल जाने से सत्य की प्रतिष्ठा हुई। जो लोग झूठ को सत्य समझ कर पकड़े हुए थे उन्हें निराश होना पड़ा।

यह संदेश पत्र ब्रहम् आत्माओं के लिए हैं उनके हाथों आकर सुशोभित हुए। उन्होंने जब उनके अर्थ-रहस्य-खोले तो अर्थ के अनर्थ करने वालों को निराशा हुई। ४

जो जैसा चाहता था उसे उसके मनोनुकुल स्वरूप धारण कर स्वामी उनसे मिले। सबके मन की बात कहते हुए वे सभी काम पूरे किये, जिनकी उनसे अपेक्षा की जाती थी। ५

कल्कि बुध अवतार के रूप में उन्होंने हिन्दू धर्म ग्रन्थ वेदान्त गीता और भागवत आदि के सांकेतिक वचनों को स्पष्ट किया। उनके गूढ़ रहस्यों और मर्म की बातों को सरल शब्दों में कह दिया। ६

अंजीर जंबूर तोरेत, चौथी जो फुरकान।
ए मायने मगज़ गुझ थे, सो जाहेर किए बयान।। ७

ए बेवरा वेद कतेब का, दोंनों की हकीकत।
इलम एकै बिध का, दोऊ की एक सरत।। ८

पेहेले लिख्या फुरमान में,
आवसी ईसा इमाम हज़रत।
मारेगा दज्जाल को,
करसी एक दीन आखरत।। ९

वेदों कह्या आवसी, बुध ईस्वरों का ईस।
मेट कलजुग असुराई, देसी मुगत सबों जगदीस।। १०

सुर, असुर अद्याप के, करत लड़ाई दोए।
ए द्वेष साहेब बिना, मेट न सके कोए।। ११

यों आए तीनों सरूप, धर धर जुदे नाम।
सो कारण ब्रह्म उमत के, गुझ जाहेर किए अलाम।। १२

साहेब आए इन जिमी, कारज करने तीन।
सो सबका झगड़ा मेट के, या दुनिया या दीन।। १३

---

७. खु० १३—९७ ८. खु० १२—२३ ९. खु० १२—३०
१०. खु० १२—३१ ११. खु० १३—८६ १२. खु० १३—८५
१३. खु० १३—८९

अन्तिम ज़माने के खाविंद के रूप में ज़ाहिर होकर इंजील, ज़बूर, तौरेत और कुरान आदि कतेब कहे जाने वाले ग्रन्थों के सांकेतिक शब्दों को स्पष्ट किया। इस प्रकार धर्म ग्रन्थों की भविष्य वाणियाँ सत्य सिद्ध करके उनके मानने वालों के मन में उनके लिए सम्मान बढ़ाया। ७

वेद और कतेब को खोलने से यह हकीकत सामने आई कि दोनों में एक ही जैसा ज्ञान है। दोनों ने एक ही प्रतिज्ञा की है कि उनका सत्य ज्ञान सबको मुक्त करेगा। ८

कुरानादि कतेब ग्रंथों में पहले से ही लिखा गया कि ईसा रुह अल्लाह, इमाम मेहदी आकर दज्जाल को मारेंगे और संसार मे हकीकी दीन इस्लाम की स्थापना करेंगे। ९

वेदादि हिन्दू धर्म ग्रन्थों में भी कहा गया कि ईश्वरों के ईश बुध निष्कलंक प्रकट होंगे। कलियुग का कलुष धो कर, उसका कुफ्र दूर करके, उसे मुक्त करेंगे। संसार के जीव भी उसके पाश से छूट कर नित्य सुख प्राप्त करेंगे। १०

अनादि काल से सुर असुर, भले बुरे का संघर्ष चल रहा है। स्वयं परमात्मा के बिना यह द्वंद कोई नहीं मिटा सकता। ११

इस प्रकार तीनों स्वरूप महंमद, ईसा रुह अल्लाह, और इमाम-श्री कृष्ण, श्री देवचन्द्र और श्री प्राणनाथ अलग नाम लेकर एक ही स्वरूप में प्रकट हुए। ब्रह्मसृष्टि के लिए उन्होंने गूढ़ ज्ञान से भरे ग्रन्थों के रहस्य और सांकेतिक अर्थ स्पष्ट किए। १२

समस्त ब्रह्मांड के स्वामी इस संसार में तीन कार्य करने के लिए पधारे हैं। लोगों में बेकार की बातों के लिए होने वाला संघर्ष मिटाया। धर्म के नाम फैली भ्रांतियों को दूर करके सब धर्मों के लोगों का वैमनस्य मिटाया। अनेक देवों की उपासना छुड़ा कर एक ब्रह्म की उपासना कराई। १३

नाम सारों जुदे धरे, लई सबों जुदी रसम ।
सबमें उमत और दुनिया, सोई खुदा सोई ब्रह्म ।। १४

लोक चौदे कहे वेद ने, सोई कतेब चौदे तबक ।
वेद कहे ब्रह्म एक है, कतेब कहे एक हक ।। १५

तीन सृष्ट कही वेद ने, उमत तीन कतेब ।
लेने न देवे मायना, दिल आड़ा दुस्मन फरेब ।। १६

दोऊ कहें वजूद एक है, अरवाह सबों में एक ।
वेद कतेब एक बतावहीं, पर पावे न कोई विवेक ।। १७

जो कछु कहया कतेब ने, सोई कहया वेद ।
बंदे एक साहेब के, पर लड़त बिना पाए भेद ।। १८

बोली सबों जुदी परी, नाम जुदे धरे सबन ।
चलन जुदा कर लिया, ताथें समझ न परी किन ।। १९

---

१४. खु० १२—३८ १५. खु० १२—३९ १६. खु० १२—४०
१७. खु० १२—४१ १८. खु० १२—४२ १९. खु० १२—४३

सब मत वालों ने परमात्मा के नाम अलग रखकर उपासना के तरीके भी अलग बना लिए थे। सबमें ब्रह्मआत्माएं भी आईं और साधारण अज्ञानी लोग भी हैं। इस तथ्य को वे भुला बैठे थे कि ब्रह्म और खुदा एक ही सत्ता के नाम हैं। महामति ने भाषा भेद को हटाकर यह तथ्य संसार में प्रकट किया। १४

उन्होंने बताया कि वेदों में चौदह लोक बताए गए हैं। कतेब ने कहा कि चौदह तबक इस ब्रह्मांड में हैं। वेदों में लिखा है कि ब्रह्म एक है और कतेब ने घोषणा की कि खुदा एक ही है। १५

वेदों ने संसार में तीन प्रकार की सृष्टि बताई जिन्हें ब्रह्म ईश्वरीय और जीव कहा। कतेब ग्रंथों ने तीन तरह के लोग बताए- असल, खास और आम। माया रूप मन जिसे दज्जाल कहा गया वही सबके दिलों को जोड़ने की राह मारता है। वह कपटी शत्रु सही अर्थ लेने ही नहीं देता। १६

दोनों तरह के ग्रंथों को मानने वालों ने स्वीकार किया कि शरीर से सब मानव समान हैं। सबमें एक ही से जीव और प्राण हैं। वेद और कतेब बार बार एकसी बातों को दोहरा रहे हैं परन्तु कोई सीधे अर्थ लेना नहीं चाहता यही विडम्बना है। १७

जो वद में कहा गया कतेव ग्रन्थों ने उसी की पुष्टि की। सब एक ही स्वामी की वंदना कर रहे हैं, इस रहस्य को न समझ पाने के कारण ही सब झगड़ रहे हैं। १८

अन्तर का कारण यही है कि सब की भाषा अलग हो गई। परमात्मा के गुणों के अनुसार उनके अनेक नाम रख लिए गए। रहने और उपासना के नियमों में देश और काल के कारण कुछ अन्तर पड़ गया। रुढ़ियों में वे इतने दृढ़ हो गए कि मूलभूत एकता की ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया। १९

दोनों जहान में थी उरझन,
करम कांड सरियत चलन ।
करी हकीकत मारफत रोसन,
साफ किए आसमान धरन ।। २०

यों उरझे नाम जुदे धर,
रब आलम का आया आखर ।
अपनी अपनी में समझें सब,
जुदा न रहया कोई अब ।। २१

सब किताबों दई साख,
जुदे नाम जुदी लिखी भाख ।
सत असत दोऊ जुदे किए,
माया ब्रह्म चिन्हाय के दिए ।। २२

महामत कहें ए मोमनो,
देखो खसम प्यार ।
ईसा महंमद अंदर आए के :,
खोल दिए सब द्वार ।। २३

---

२०. कि० बड़ा १—३२ २१. कि० बड़ा १—३०
२२. कि० बड़ा १—३१ २३. खु० १७—८२

दोनों जहानों (पूर्व और पश्चिम) में-वेद और कतेब के मानने वाले उलझन में पड़ गए। कर्म-कांड और शरियत के चलन को ही धर्म मान बैठे। महामति ने धर्मग्रन्थों, कर्मकांड और शराअ की हकीकत और मारफत-(सत्य ज्ञान और पहचान) बताई और इस तरह ज़मीन आसमान (समस्त ब्रह्मांड) में फैले वैमनस्य को दूर करके संसार को निर्मल किया। २०

अलग अलग नाम रखकर जो लोग उलझ रहे थे उनको सुलझाने के लिए ही ब्रह्मांड के स्वामी आए। अपने अपने ग्रन्थ से सबने मर्म जाना तो कोई अलगाव न रहा। २१

सब धर्मग्रन्थों ने एक ही बात की साक्षी अलग भाषाओं में दी और अनेक नामों में एक ही सत्ता के प्रकटीकरण की घोषणा की। महामति ने सत्य और असत्य को अलग किया। माया और ब्रह्म की पहचान कराई। २२

महामति कहते हैं, 'हे मोमिनो स्वामी का प्यार देखो। मेरे अन्दर ईसा रूह अल्लाह और महंमद ने आकर सभी भ्रम निवारण किए। समस्त संसार के जीवों के लिए मुक्ति और विश्व शान्ति के द्वार खोल दिए। २३

मैं इनमें नहीं हूं

रे हूं नाहीं व्रत दया संज्ञा,
न अगिन कुँड न हूं जीव जगन ।
तंत्र न मंत्र भेष न पंथ,
न हूं तीरथ तरपन ॥ १

रे हूं नाहीं नवधा में मुक्त में भी नाहीं,
न हूं आवागमन ।
वेद कतेब हिसाब में नाहीं,
न माहें बाहेर न सुंन ॥ २

साधो सबे जोगारम्भ,
अनहद अजपा आसन ।
उड़ो गड़ो चढ़ो पांच में,
आखर सुंन न छोड़ी रे किन ॥ ३

आगम भाखो मन की परखो, सूझे चौदे भवन ।
मृतक को जीवत करो, पर घर की न होवे गम ॥ ४

सात बेर अस्नान करो, पेहेनो उन उत्तम कामल ।
उपजो उतम जात में, पर जीवड़ा न छोड़े बल ॥ ५

---

१. कि० १२—२ २. कि० १२—६ ३. कि० १५—६
४. कि० १५—१० ५. कि० १५—४

मैं इनमें नहीं हूं

'मुझ परमात्मा' को खोजने वालो 'मैं' कर्म कांड में नहीं हूँ। व्रत रखने में, दिखावे के लिए दया करने में, प्रातः सायं उपासना में, अग्नि उपासना-हवनादि में, बलि यज्ञों में, तंत्र साधना, मंत्र जाप अथवा किसी भी भेष या पंथ को धारण करने में नहीं हूँ। तीर्थों की यात्रा में, पितरों के तर्पण आदि में मुझे खोजने की चेष्टा न करें। १

नवधा भक्ति (श्रवण, मनन, नाम स्मरण, पूजन, अर्चन, वंदन, कीर्तन, दास्य सखा) में, मुक्ति की चाह में, अथवा आवागमन-जन्म मरण-के चक्र में भी मैं नहीं हूँ। वेद और कतेब के व्योरे से ज्ञान रखने वालों में मैं नहीं हूँ। पिंड के अंदर अथवा उसके बाहर ब्रह्मांड में भी मैं नहीं हूँ। इस ब्रह्मांड के पार और ब्रह्मांड का मूल जो शून्य हैं, मैं उसमें भी नहीं हूँ। २

इसलिए चाहे तुम योगाभ्यास से शरीर सुखा लो, अनहद शब्द सुनने लगो, तुमसे निरंतर बिना जपे सहज जाप होने लगे, शरीर में स्थित पांच केन्द्रों में उतरने चढ़ने लगो। आसन में बैठ कर ध्यान लगा लो। यह सब साधन शून्य में ही ले जाने वाले हैं, पारब्रह्म तक नहीं पहुँचा पाते। ३

ज्योतिष विद्या में पारंगत हो कर मन की बात बूझ लो, चौदह लोक का ज्ञान तुम्हें यहीं बैठे होने लगे। मृतक व्यक्ति को जीवन देदो परन्तु यह बातें अखंड घर परमधाम नहीं ले जाएँगी। ४

छूआ छूत और शुद्धि का अधिक ध्यान रखते हुए बार बार स्नान करलो अथवा शुद्ध कहे जाने वाले उत्तम ऊनी वस्त्र धारण करलो। सबसे उच्च और श्रेष्ठ कही जाने वाली जाति में जन्म ले लेने से भी जीव के बन्धन नही कटते और मन की उलझनें सुलझती नहीं। ५

सौ माला वाओ गले में,
द्वादस करो दस बेर ।
जोलो प्रेम न उपजे पीउ सों,
तोलों मन न छोड़े फेर ।। ६

ए तो हाथ में वस्त कहूं दूर न देखाऊं,
तुम देखो खोज विचारी ।
सांच झूठ को प्रकट पारखो,
कोई निकसो इन अंधारी ।। ७

जिन अंगों मिलिए पीऊ सों,
सोई दिए उलटाए ।
फेरी दुहाई वैराट चोखूटों,
कोई सिर न सके उठाए ।। ८

माया गुण सब करो हाथ,
पेहेचानो प्राण को नाथ ।
जब ऐता आत्म सों करो विचार,
कौन वचन कहे आधार ।। ९

---

६. कि० १५—५ ७. कि० ११—८ ८. कि० ६०—१४
९. प्र० हि० २९—६८ ।

साधु वेष बनाते हुए सैंकड़ों मालाएँ धारण करलो, एकादशी, द्वादशी आदि व्रत और उत्सव बार बार मना लो, परन्तु जब तक प्रियतम परमात्मा के लिए हृदय में प्रेम उत्पन्न नहीं होता तब तक मन का चक्र तो चलता ही रहेगा। ६

यह सब बातें तो सामने हाथ में हैं। नित्य देखने में आतीं हैं। इन्हें देखो और विचार करो। सत्य और झूठ को परखना सीखो। इस दिखावे के कर्म कांड और ज्ञान के अहंकार से पूर्ण मायावी संसार के अंधकार से निकलो। ७

जिन अंगों से प्रियतम से मिलना है उन्हीं को इस माया रूप दज्जाल ने उल्टे साधनों में लगा लिया है। समस्त ब्रह्मांड में चारों कोनों में इसी का बोल बाला है। इसके सामने कोई सिर नहीं उठा सकता। ८

इसलिए इस माया में धारण किए नश्वर तन के सब अंगों तथा गुण अंग इन्द्रियों को अपने सखा बना कर साथ लो। इन्हीं के द्वारा अपने प्रियतम की पहचान करो। अपनी आत्मा में इतना तो विचारो कि अपने प्रियतम ने हमें कैसे वचन कहे हैं ? ९

निजघर पिऊ को लीजे प्रकास,
ज्यों वृथा न जाए एक सांस ।।
ग्रह गुण अंग इन्द्री भर तू पाओ,
ऐसा फेर न पाइए दाम्रो ।। १०
बोहोत देखे दुख अधिक होएसी,
ताथे उठो ततकाल जी ।
जीव का घर नींद में,
ज्यों रहे मकड़ी माहें जाल जी ।। ११
बेहद सुख पार बेहद घर,
बेहद पार श्री राज जी ।
अखरातीत सुख अखंड देने को,
जगाऊं तुमारे काज जी ।। १२
जो जानो घर पाइए अपना,
तो राखियो रस वैराग जी ।।
सकल अंगों सुध सेवा कीजो,
इन बिध बैठो जाग जी ।। १३
या बिध मेला पीऊ का,
पीछे न्यारे नहीं रैन दिन ।
जल में न्हाइये कोरे रहिए,
जागिए मांहें सुपन ।। १४

१०. प्र० हि० २१—१७ ११. प्र० हि० ३०—१३
१२. प्र० हि० ३०—१८ १३. प्र० हि० ३०—४२ १४. कि० ३५—२८

अपने मूल घर परमधाम तथा प्रियतम प्राणनाथ से प्रकाश लेकर मन को प्रकाशित और उज्जवल करो। जीवन ऐसा हो जाए कि एक श्वास भी उनकी याद बिना व्यर्थ न जाए। गुण अंग इन्द्रियों को साथ लेकर ऐसे कदम उठाओ कि उनसे मिलन हो सके। फिर ऐसा अवसर हाथ नहीं आएगा। १०

इस संसार में जितना मन लगाओगे दुख उतना ही अधिक होगा। इसलिए अभी इसी क्षण जाग जाओ। माया के जीवों का ही घर मोहजल में है। वे मकड़ी की तरह स्वयं ही जाल बुन कर उसमें फँस जाते हैं। ११

(संसार का सुख क्षणिक और सीमित है) असीम आनन्द तो शून्य निराकार के पार असीम परमधाम में ही सम्भव है। उसी धाम में अपने स्वामी विराजमान हैं। उस उत्तम पुरुष अक्षरातीत ब्रह्म का असीम आनन्द आपको देने के लिए, आपकी भलाई के लिए ही आपको जगा रही हूं। १२

यदि आप अपने घर पहुंचना चाहते हों तो (वैर प्रेम, हंसी शोकादि विरोधी भावनाओं से मुक्त) वैराग्य रस में रहना होगा। मन वचन कर्म तथा सभी गुण अंग इंद्रियों से प्रभु के होना पड़ेगा। तभी गहन निद्रा से जागना सम्भव है। १३

पहचान कर जब प्रियतम से मिलना हो जाए तो दिन रात उनसे रमण होता है। फिर संसार में रहते हुए भी कीचड़ में कमल की तरह आप उससे अछूते रहते हो। जल में नहाते हुए कोरा रहना इसे ही कहते हैं। इस स्वप्नवत संसार में फरामोशी से जागना केवल इसी तरह सम्भव है।

इस तरह स्वप्न में रहकर जागो। माया के सुख दुख देखते हुए परमधाम के अखंड सुखों का अनुभव करो। १४

नाम महिमा

पर न आवे तोले एक ने, मुख श्री कस्न कहंत ।
प्रसिद्ध प्रगट पाधरी, किवता किव करंत ।। १

कोट करो नरमेध, अस्व मेध अनंत ।
अनेक धरम धरा विषे, तीरथ बास बसंत ।। २

सिध करो साधना, विप्र मुख वेद वदंत ।
सकल क्रिया सूं धरम पालतां, दया करो जीव जंत ।।३

ब्रत करो विध विध ना, सती थाओ सीलवंत ।
वेष धरो साध संत ना, ग्नानी ग्नान कथंत ।। ४

तपसी बहुबिध देह दमो, सरवा अंग दुख सहंत ।
पर तोले न आवे एकने, मुख श्री कस्न कहंत ।। ५

मेहेराज कहें मुख ए धन, जो वली रुदे रमंत ।
चौदे भवन ते जीतियो, धंन धंन ए कुलवंत ।। ६

---

१. कि १२७—१ २. कि० १२७—२ ३. कि० १२७—३
४. कि० १२७—४ ५. कि० १२७—५ ६. कि० १२७—६

नाम महिमा

अनेक साधनाओं को एक साथ कर डालो परन्तु मुख से श्री कृष्ण का नाम लेने के समान कोई भी नहीं। यही साधना जग विख्यात है, स्पष्ट है और सरल है। कवि जनो ने अनेक काव्य रच डाले परन्तु कृष्ण नाम सा रसमय कोई न हुआ। १

करोड़ों नरमेध यज्ञ करो, असंख्य अश्वमेध यज्ञ कर डालो और भी अनेक धर्म कार्य संसार में हैं उन सब को करो, सदैव तीर्थों में निवास करो परन्तु तन्मयता और पूर्ण समर्पण भाव से श्री कृष्ण का नाम एक बार लेते ही सब फीके पड़ जाते हैं। २

साधनः से अनेक सिद्धियाँ पा लो, ब्राह्मण कुल में जन्म पा कर वेदों को कंठस्त कर लो, आपके सभी कार्य धर्म मय हों-धर्म के सभी अंगों का पालन करो, परम ज्ञानी बन कर ज्ञान चर्चा करो सब जीवों पर दया करो तो भी कृष्ण नाम की सी गहनता उनमें नहीं है। ३

अनेक व्रत उपवास करके अपने सतित्व धर्म और शील द्वारा सति नारियां कहलाओ, चाहे तो साधु संत का बाना पहन लो या फिर ज्ञानी बनकर ज्ञान चर्चा करो यह सब बातें नगण्य लगती हैं जब मन श्री कृष्ण नाम में समर्पित हो जाता है। ४

तपस्वी लोग अनेक प्रकार से तप करके शरीर को सुखा लो या इन्द्रियों को कष्ट दो। परन्तु कृष्ण नाम की तुलना नहीं हो सकती क्योंकि नाम लेते ही गुण अंग इन्द्रियां सखा बन जाते हैं। ५

मेहेराज* कहते हैं वह मुख धन्य है जिससे श्री कृष्ण का नाम निकले फिर उसका तो कहना ही क्या जो मन में इस नाम के साथ रमण करता है। ऐसा कुल श्रेष्ठ व्यक्ति धन्य है, जो श्री कृष्ण नाम में लीन हो गया है। उसने तो मानो चौदह लोक को जीत लिया है। ६

---

*महामति प्राणनाथ

साधना की शत्रु बुजरकी

बुजरकी मारे रे साथ जी, बुजरकी मारे ।
जिन ए लई बुजरकी, तिनको कोई न उबारे ।। १

छोड़ो रे मान गुमान ज्ञान को,
एही खांड बड़ी है भाई ।
एक डारी त्यों दूजी भी डारी,
जलाए देओ चतुराई ।। २

इन माया में बुजरकी, छूट खुदा जो लेवे ।
सो तेहेकीक आपे अपना, पाया फल भी खोवे ।। ३

खोवे जोस बंदगी खोवे, और साहेब की दोस्ती ।
बिना इस्क जो बुजरकी, सो सब आग जानो जेती ।। ४

इन जिमी में साथ में, जिनो करी सिरदारी ।
पुकार पुकार पछताए चले, जीत के बाजी हारी ।। ५

मोको मार छुड़ाई बंदगी, सो भी बुजरकी इन ।
ऐसी दुस्मन ए बुजरकी, मैं देखी न ऐते दिन ।। ६

---

१. कि० १०२—१ २. कि० ६—६ ३. कि० १०२—५
४. कि० कि० १०२—६ ५. कि० १०१—१० ६. कि० १०२—९

साधना की शत्रु बुजरकी

हे मेरे साथियो ! बड़प्पन और प्रतिष्ठा तुम्हें मार डालेगी। बजुर्गी तुम्हें कहीं का न छोड़ेगी। जिन्होंने मान सम्मान का विचार किया उनकी रक्षा फिर कोई नहीं कर सकता। १

हे मेरे भाई ! मान की चाह और ज्ञान का अभिमान छोड़ दो। प्रियतम मिलन की राह में यह एक बड़ी खाई है। उस एक को पाने के लिए आप समस्त संसार के प्रलोभनों से बच निकले हो, परन्तु जिस अभिमान को छोड़ना था, उसे अभी तक साथ लिए हो। परमात्मा प्रेम से मिलते हैं, उनसे दूर करने वाली चतुराई को जला दो। २

इस मायावी संसार में खुदा के सिवा जो बड़प्पन लेना चाहता है वह निश्चित ही अपने शुभ कर्मों के फलस्वरूप मिलने वाले फल से भी वंचित रह जाता है। बड़प्पन छोड़ने से तो शायद उसे बहुत कुछ (परमात्म भाव भी) प्राप्त हो जाता परन्तु संसार में प्रतिष्ठा के तुच्छ प्रलोभन में पड़ कर अमूल्य वस्तु खो बैठा। ३

सम्मान की चाह में वह परमात्मा का जोश, उसकी उपासना और प्रियतम की मित्रता खो देता है। परमात्मा का प्रेम खो कर जो बड़प्पन मिलता है उसे आग की तरह समझो। ४

इस संसार में, अपने साथियो में, जो सिरदार बन कर आगे चले उन्होंने पुकार पुकार कर पछताते हुए अन्त में कहा है कि हमने तो हाथ आई बाज़ी गंवा दी। (शुभ कर्मों के फलस्वरूप जो मानव तन हमें मिला था उसे बड़प्पन के मोह में गंवा दिया) ५

इस बड़प्पन की चाह ने मुझे भी मार ही डाला था। मुझसे मेरे साहब की बंदगी छुड़ा ही दी थी। यह बुजरगी एक महान शत्रु है। इसके जैसा वैरी मैंने आजतक कोई देखा ही नहीं। ६

जो कोई मारे इन दुस्मन को,
करे सब दुनिया को आसान ।
पोहोंचावे चरण धनीय के,
तो भी लेना न तिन गुमान ।। ७

इलम चातुरी खूबी अंग की,
मोहे एही पट लिख्या अंकुर ।
एही न देवे देखने,
मेरे दुल्हे के मुख का नूर ।। ८

जिन दयाएं ए परदा उड़ाइया,
मैं फेर फेर मांगूं सोई मेहर ।
इस्क दीजे मोहे आपनो,
जासों लगे बुजरकी जेहर ।। ९

७. कि० १०२—११ ८. कि० ६२—४ ९. कि० ६२—१३

जो कोई ऐसे महान शत्रु, इस बुज़ुर्गी, को मार भो ले और समस्त संसार के लोगों के लिए राह आसान कर दे। सबको प्रियतम के निकट उनके चरणों तक ले आए तो भी रंचमात्र अभिमान न आने दे। ७

ज्ञान का चातुर्य, अंगों का सौंदर्य और गुण, अपनी विशेषताओं का अभिमान यही तो मेरे और प्रियतम के बीच का पर्दा है। यही तो मुझे मेरे प्रियतम के दर्शन से वंचित कर देता है। ८

परमात्मा की जिस कृपा से मेरा यह पर्दा दूर हुआ मैं बार बार उसी मेहर की याचना करती हूँ। मेरे प्रियतम ! मुझे अपना प्रेम दीजिए जिससे बड़प्पन मुझे विष तुल्य लगने लगे। ९

आतम जागृति की ओर

देख तू निसबत आपनी, मेरी रुह तू आंखां खोल ।
तैं तेरे कानो सुने, हक बका के बोल ।। १

मजकूर बका बीच में, किया हक हादी रुहन ।
दई परामोशी हांसीय को, बीच अपने अरस मोमन ।।२

ऐसी तुम्हें दिखाऊं दुनियां,
और पनाह में राखें छिपाए ।
ओ तुम्हें न चीन्हहीं,
न तुमें ओ चिन्हाय ।। ३

ऐसी देखोगे दुनियां, हक न काहू खबर ।
न सुध अरस न आपकी, कई ढूंडत सहूर कर ।। ४

जो हुए होवें मुरदे, तिनको देत उठाए ।
ऐसा इलम लदुंनी, पर तुमे न सके जगाए ।। ५

रुहें कहें हांसी होसी अति बड़ी,
तुम हूजो सबे होसियार ।
क्यों ए न भूलें आपन,
जो खेल जोर करे अपार ।। ६

१. खि० ९—१ २. खि० १४—३ ३. खि० १४—४
४. खि० १४—१४ ५. खि० १४—१३ ६. खि० १४—२०

आत्म जागृति की ओर

मेरी फरामोश रुह, प्रियतम से अपने सम्बन्ध को पहचान कर आंखें खोल। तुमनें अपने कानो से अखंड परमधाम के मालिक अपनें स्वामी के मनुहार भरे आह्वान को सुन लिया, फिर भी होश में नहीं आती। १

परमधाम में स्वामी, उनकी अंगना श्यामा तथा बारह हजार ब्रह्मआत्माओं में प्रेम की होड़ हुई। स्वामी ने अपनी प्यारी रुहों से हँसी करने के लिए अपने धाम में उनको विस्मृति दे दी–उनसे अपना प्यार भुला दिया। २

उन्होंने कहा कि आपको अपने संरक्षण में लेकर, ऐसी दुनिया दिखाऊँ, जो न आपको जानती हो और न आप ही उसे समझ पाओगे। ३

एक ऐसा संसार देखोगे जहाँ मुझ परमात्मा को कोई जानता नहीं। न तो परमधाम को, न उन्हें अपनी ही खबर होगी। बेशक कई लोग अपनी समझ से मुझे खोजते फिरते होंगे। ४

ऐसे विश्व में अपनी रुहों, को आप सब को, सावधान करने के लिए मैं ऐसा ज्ञान भेजूंगा जो कि मुरदों में भी जान डालनें की सामर्थ्य रखता है। लेकिन ऐसा वह ब्रह्मज्ञान तुम्हें विस्मृति की नींद से जगा न पाएगा। ५

ब्रह्मात्माएँ एक दूसरी को सावधान करती हुई कहती हैं कि यदि सचमुच ऐसा ही हुआ तो बड़ी हँसी होगी। हम सब को सावधान रहना चाहिए। वह तिलस्म कितना भी भुलाने का प्रयास करें, हमें भूलना नहीं चाहिए। ६

आपन सामी हांसी करें हक सों,
चले न खेल का बल।
आपन आगूं चेतन हुइयां,
रहिए एक दूजी हिलमिल ।। ७

एक वजूद होए बैठियां, खेलें ऐसी दई भुलाए।
कौल फेल हाल सब जुदे, दिल ऐसे दिए फिराए ।। ८

इन झूठी जिमी में बैठाए के, देखाई हक निसबत।
मेहेर करी रुहों ऊपर, देने अरस लज्जत ।। ९

सब दुनियां हक इस्क हुआ,
तो देखो अरस में होसी कहा।
ए आया इलम रुहन पर,
हकें भेज्या ए तोफा ।। १०

अनंत सुख इन वखत को,
जो कदी आवे रुह मांहिं।
तो नींद निज अंग असल की,
उड़ जावे कहु कांहिं ।। ११

कौन बदबोए में हुते, अब आई कौन खुसबोए।
सहूर अपने दिल में, तौल देखो ए दोए ।। १२

---

७. खि० १४—२१ ८. खि० १४—३१ ९. खि० १४—८५
१०. सिन० २—३९ ११. परि० ३१—१२१ १२. खि० १४—९५

हम लोग सावधान रहें तो स्वामी के साथ उल्ट कर दिल्लगी करने का अवसर मिलेगा। फिर हम तो पहले से ही चौकस हो गई हैं। एक दूसरी से लिपट कर एक साथ रहो जिससे कोई भी अलग होकर भटक न जाए। ७

वहाँ तो सब ऐसे बैठीं हैं मानो एक ही शरीर हो परन्तु इस मायावी खेल ने ऐसा भुला दिया कि सबके वचन कर्म और जीवन अलग हो गए। उनके मन सर्वथा बदल गए। ८

स्वामी ने फिर भी कृपा की। इस संसार में बिठा कर अपना सम्बन्ध दिखाया। इस नश्वर संसार में अखंड परमधाम का आनन्द अनुभव करा दिया। ९

उनके प्रेम की बदौलत समस्त संसार प्रेममय हो गया तो परमधाम में उनका प्यार कैसा होगा ? अपनी प्यारी अंगनाओं को यह दिखाने के लिए स्वामी ने अपने ज्ञान और प्रेम का उपहार दिया। १०

इस संसार में प्रियतम के दिए अनन्त सुख यदि आत्मा तक पहुंच पाएँ तो परमधाम में अपने मूल तन में फरामोशी की जो नींद छाई है वह उड़कर न जाने कहाँ चली जाती। आत्मा को जिस विस्मृति ने घेर लिया है वह काफ़ूर हो जाती। ११

(परमात्मा की कृपा हो जाए तो, ज्ञान से उन्हें पहचान कर, प्रेम से उनके करीब आकर देखो। अपने विवेक की तुला पर तुलना करो तो स्पष्ट हो जाएगा कि) आज तक किस दुर्गन्ध को सुवास मान बैठे थे ? अब प्रियतम के अर्श की कैसी खुश्बू तुम्हें मिल रही है ? १२

देखो दिल सों दसों दिस, किन तरफ है हक ।
ए विचार देखो दिल में, तो ज़रा न रहे सक ।। १३

कौन तरफ वजूद है, कौन तरफ है कौल ।
हाल कौन तरफ का, कौन तरफ है फैल ।। १४

ए सब एक तरफ है, के जुदे जुदे दौड़त ।
देखो सहूर करके, है कौन तरफ निसबत ।। १५

जब एक ठौर पांचों भए, तो तुमारा इत का ।
सत संदेसा तौहीद को, क्यों न पोंहोचे माहें बका ।। १६

इलम दिया तुमें लदुंनी, तब बदले कौल चाल ।
फैल होवे वाहेदत का, तब बेर न लगे हाल ।। १७

कौल फैल जुदे हुए, हुआ फरामोसी हाल ।
अब पड़े याही सक में, इन जुदागी के ख्याल ।। १८

एही तुमारी भूल है, तुमें बंधन याही बात ।
एही फरामोसी तुमको, जो भूल गए हक्क ज़ात ।। १९

---

१३. खि० १५—५८ १४. १५—५९ १५. खि० १५—६०
१६. खि० १५—६१ १७. खि० १५—६२ १८. खि० १५—६५
१९. खि० १५—६४.

जाग कर, दशों दिशाओं से, सब ओर से अपनी रहनी को देखो। परमात्मा किस ओर हैं और तुम उन्हें किधर ढूंड रहे हो। दिल से विचारो तो तुम्हारी कमी कहां है इस बात में शंका न रहे। १३

तुम्हारा शरीर तुम्हें किधर खींचता है? मुख से वचन कैसे निकलते हैं? तुम्हारी दशा क्या हो गई है और तुम कर्म कैसे कर रहे हो? १४

यह सबके सब एक ओर-प्रियतम की ओर-हैं या अलग अलग दिशाओं में तुम्हें खींच कर भाग रहे हैं? और फिर विवेक पूर्वक देखो कि आपका सम्बन्ध किससे जुड़ा है? १५

जब सभी गुण अंग इन्द्रिय, मन वचन कर्म एक ही जगह स्थिर हो जाएँ तो आपका यहीं बैठे प्रियतम को धाम में संदेश क्यों न पहुंचेगा। १६

प्रियतम ने कृपा करके ब्रह्मज्ञान तुम्हें दिया तो उससे कथन और चलन बदलना ही चाहिए। पूर्णसमर्पण भाव से उनसे एकात्म होकर कर्म होने लगें तो मुक्त दशा तक पहुँचने में देर न लगे। १७

जब आपके वचन और कर्म में अन्तर आया तो अज्ञान दशा-फरामोशी का हाल हुआ। प्रियतम की जुदाई के विचार ने तुम्हें शंका में डाल दिया। १८

तुम्हारी मात्र इतनी सी ही भूल ने तुम्हें संसार से बांध दिया है। आप स्वामी के अस्तित्व को भूल गए हो, इसीलिए इस मोह निद्रा से जागना असम्भव हो गया है। १९

हांसी याही बात की, किए खेल में खबरदार ।
तो भी इस्क न आवत, हुई हांसी बेसुमार ।। २०

एक इस्क दूजा इलम, ए मोमनों न्यामत ।
इस्क गरक वाहेदत में, इलमें हक अरस लज्जत ।। २१

ताथे तू चेत रुह अरस की, ग्रहे अपने हक के अंग ।
रोहो रात दिन सोहोबत में, हक खिलवत सेवा संग ।२२

जो मासूक सेज न आइया,
देख्या सुन्या न कही बात ।
सुख अंग न लियो इन सेज को,
ताए निरफल गई जो रात ।। २३

लाहा लीजे दोनों ठौर का,
सुनो मोमिनो कहें महामत ।
क्यों सुपने ए चरण छोड़िए
अपनी असल निसबत ।। २४

---

२०. सिन० २८—३३ २१. सिन० २५—७७ २२. सिं० २४—६७
२३. सिन० ६—३७ ।

हँसी की बात तो यही है कि संसार में आकर प्रियतम ने तुम्हें सावधान कर दिया तो भी तुम उनसे प्रेम न कर सके। इसीलिए उपहास का पात्र बने। यहाँ जागना न हो सका तो यह हँसी भी असीम हो गई। २०

एक तो परमात्मा का प्रेम दूसरा उनका ज्ञान दोनों ही वस्तुएँ प्रियतम के उपहार हैं। इश्क उनके एकत्व में, उनमें एक कर देता है और इल्म से परमधाम का अखंड आनन्द मिलता है। २१

इसलिए हे अर्श की रुह ! तू चेत कर प्रियतम के चरण, उनके स्वरूप को धारण कर। दिन रात उनकी संगति में उनकी सेवा में रह। उनसे एकान्त का सुख ले। २२

यदि इस नश्वर संसार के जीवन की रात में, इस शरीर की सेज पर प्रियतम न आए-उनके दर्शन न किए, उनके मीठे बोल न सुने, उनसे बात न की अथवा इन अंगों से उनसे मिलन का सुख न पाया तो समझ लो यह रात, यह जीवन तो बस अकार्थ ही चला गया। २३

महामति कहती हैं इसलिए हे मोमिनों, इस नश्वर शरीर में दोनों ठिकाने, संसार और परमधाम का लाभ लेने का अवसर हाथ से न जाने दो। इस स्वप्नवत संसार में यदि अपना स्वामी से सच्चा सम्बन्ध है तो स्वप्न में भी उनके चरण क्यों छोड़ें ? २४

प्रेम का 'दर्शन'

तुमको इस्क उपजावने, करुं सो अब उपाए ।
पूर चलाऊं प्रेम के, ज्यों याही में छाक छकाए ।। १

इस्क जिन बिध उपजे, मैं सोई देऊं जिनस ।
तब इस्क आया जानियो, जब इन रंग लागा रस ।। २

प्रेम नाम दुनियां मिने, ब्रह्म सृष्टि ल्याई इत ।
ए प्रेम इनो जाहेर किया, न तो प्रेम दुनी में कित । ३

ए सुख बिसरे धनीय के, इन सुपन भोम में आए ।
सो फेर फेर याद देत हों, जो गए तुमें बिसराए ।। ४

निसदिन रंग मोहलन में, साथ स्यामा जी स्याम ।
याद करो सुख सब अंगों, जो करते आठों जाम ।। ५

चौकस कर चित दीजिए, आतम को एह धंन ।
निमख एक न छोड़िए, कर मन वाचा करमन ।। ६

निमख निमख में निरखिए, पट न दीजे पल ल्याए ।
छेटी खिन न पड़ सके, यों इस्क जोस अंग आए ।। ७

ताथे पल पल में ढिग होईए, सुख लीजे जोस इस्क ।
त्यों त्यों देह दुख उड़सी, संग तज मुनाफक ।। ८

---

१. परि० ४—१ २. परि० ४—२ ३. परि० ३६—२
४. परि० ४—३ ५. परि० ४—५ ६. परि० ५—६
७. परि० ५—१२ ८. परि० ४—६

प्रेम का 'दर्शन'

तुम्हें प्रियतम से प्यार हो जाए इसका कुछ उपाय करूं। प्रेम की ऐसी बाढ़ आ जाए कि उसमें डूब जाओ। उनकी मस्ती में छक कर रह जाओ। १

प्रेम हो जाए ऐसी कोई वस्तु तुम्हें दूं। जब उनकी बात में रस आने लगे तो समझो प्रेम होने लगा है। २

प्रेम का नाम संसार ने ब्रह्मसृष्टि से ही सुना और जाना। इनके व्यवहार से ही उन्हें प्रेम का परिचय मिला, नहीं तो संसार में कब किसने किससे प्रेम किया था ? ३

इस स्वप्नवत संसार में आकर तुम्हें परमधाम में धनी से मिलने वाले आनन्द भूल गए। उन भूली बातों की मैं तुम्हें फिर फिर याद दिलाती हूं। ४

अपने रंग महल में प्रियतम और प्यारी के साथ आठों पहर दिन-रात जो आनन्द की क्रीड़ाएं करके अंग-प्रत्यंग में जो सुख होता था उसे याद करो। ५

चित्त को सजग करके आत्मा को ध्यान पूर्वक यह धन दो। मन वचन कर्म से एक पल भी उनको न छोड़ो। ६

प्रतिपल उन्हीं को देखते रहो ? पलकों का पर्दा तक गिरने न दो। एक क्षण का भी अन्तर न हो तो प्रियतम का प्रेम और उनका जोश अंगों में समा जाएगा। ७

इस तरह प्रतिपल उनके निकट आते जाइये और बढ़ते हुए प्रेम और जोश का आनन्द लूटते चलिए। जैसे जैसे वह आनन्द अन्तर में समाएगा, वैसे ही नश्वर का मोह दूर होगा और शरीर से प्रतीत होने वाले दुख दूर होंगे। ८

ज्यों ज्यों होवे अरस नजीक,
त्यों त्यों खेल होवे दूर।
यों करते खेल छूटया नज़रों,
तो रुहें कदम तले हजूर ॥ ९

बैठते उठते चलते, सुपन सोवत जाग्रत।
खाते पीते खेलते, सुख लीजे सब बिध इत ॥ १०

फेर फेर सुरत साधिए, धनी चरित्र सुख चैन।
इस्क आए बेर कछु नहीं, खुल जाते निज नैन ॥ ११

खिन खिन में सुख होएसी, धनी याद किए असल।
ए सुख आए इसक, बेर न लगे एक पल ॥ १२

मैं जो दई तुमें सिखापन,
सो लीजो दिल दे।
महामत कहें ब्रह्म सृस्ट को,
सखी जीवन हमारा ए ॥ १३

---

९. सिन० २४—१३ १०. परि० ४—१९ ११. परि० ४—२३
१२. परि० ४—२४।

जितना अर्श निकट आएगा संसार उतना ही दूर होता जाएगा। जब संसार का मोह सर्वथा छूट जाएगा तो आप स्वयं को उनके चरणों में उनके अति निकट पाओगे। ९

उठते हुए, चलते हुए, स्वप्न में, सोते जागते, खाते पीते या खेलते हुए हर दशा में हर समय उनके साथ रहो और उनका सुख यहीं इस तरह प्राप्त करो। १०

बार बार ध्यान लगाते रहिए। स्वामी के क्रिया कलापों को याद कीजिए। एक बार जो प्रेम आ गया तो अन्तर की आंखें खुल जाएंगी। ११

फिर तो धनी की याद में पल पल आनन्द बढ़ता जाएगा। यह सुख आत्मा को मिल जाएं तो प्रेम आते देर नहीं लगती। (इन सुखों की याद से प्रेम आता है और प्रेम के आने से आनन्द बढ़ता है। दोनों अरस परस हैं)। १२

मैंने जो तुम्हें सीख दी है उसे पूरे मन से लेना। क्योंकि हे आत्माओ ! यही तो हमारा जीवन है। १३

खुदी, गुनाह, हुकम

यों कई बिध देखाई माया, कईबिध कराई पेहेचान ।
कई बिध बदली मजलें, कै पुराए साख निसान ।। १

हक की बातें अनेक हैं, कही न जाएं या मुख ।
इन झूठे खेल में बैठाए के, कै दिये कायम सुख ।। २

जब लग मैं सुपने मिने, नाहीं खसम पेहचान ।
तब लग मैं सिर अपने, बोझ लिया सिर तान ।। ३

मैं मैं झूठी दिल पर, जब लग करे कुफर ।
सत संदेसा तौहीद को, तोलों पोंहोचे क्यों कर ।। ४

ए मैं मैं क्यों ए मरत नहीं, और कहावत है मुरदा ।
आड़े नूर जमाल के, एही है परदा ।। ५

पेहेले पी तू सरबत मौत का, कर तेहेकीक मुकर्रर ।
एक ज़रा जिन सक रखे, पीछे रोहो जीवत या मर।। ६

---

१. खि० ५—१   २. खि० ५—२   ३. खि० ३—४३
४. खि० २—२७   ५. खि० २—२८   ६. खि० २—३१

खुदी, गुनाह, हुकम

इस तरह प्रियतम ने कई प्रकार से माया दिखाकर भुलाया और फिर अपनी पहचान भी करा दी। कई तरह से हमारी मनोदशा के अनुसार हमें धीरे धीरे मंज़िल के निकट लाए। हमारी राह में कई संकेत और गवाही खड़ी कीं। १

सत्य स्वामी की अनेक बातें हैं, मैं कहां तक गिनूं ? इस मुंह से उनका कहां तक वर्णन करूं ? उन्होंने मुझे इस नश्वर संसार में बिठाकर असंख्य अखंड सुख दिए। २

जब तक मैं स्वप्न में थी और स्वामी की महानता का परिचय नहीं मिला था, तब तक संसार के सभी कार्य-व्यवहार अपने समझ, अहंकार के बोझ से दबी रही। ३

इस बात से अनभिज्ञ रही कि जब तक अहं, अपने होने के आभास का गुनाह, संग लगा रहता है तब तक हमारा सत्य संदेश उस अद्वैत सत्ता, परमात्मा को कैसे पहुंच सकता है ? ४

यह 'मैं पन' का अभिमान मरता भी नहीं और इसकी वास्तविकता भी कुछ नहीं है। प्रियतम और मेरे बीच यही 'मैं' पर्दा बन कर खड़ी है। ५

सर्वप्रथम इसी 'मैं' को मारने के लिए ब्रह्मरस का पान करो। (संसार असार है और केवल परमात्मा की ही सत्ता है यह बात निश्चित रूप से समझ ली जाए), उसकी सत्ता के विषय में तनिक भी शंका न रहे। फिर यह देह रहे या न रहे इसकी चिन्ता नहीं। ६

जो मैं भारत अवल, तो कौन सुख लेता ए।
है नाहीं के फरेब में, सुख नूर पार का जे ।। ७

बीच खेल और खाविंद, पट तुमारा वजूद।
पीठ दे हक को ए देखत, जो न कछू है नाबूद ।। ८

मैं देख तकसीर अपनी, पेहेले देख डरी इक बार।
देख डरी सामी हक, तब मैं किया पुकार।। ९

मैं देखे गुनाह अपने, हक के देखे एहसान।
उमर गई पुकारते, बीच हलाकी जहान ।। १०

कबहूं किनहूं न किए, ऐसे अधम कर्म।
देख गुनाह अपने, फेर फेर किए जुलम ।। ११

गुन्हे भी अपने तब देखे, जब मैं हुई हुसियार।
देखी हुसियारी ए भी ख़ुदी, डरी हुई खबरदार ।। १२

पेहेचान लई सो भी खुदी,
मैं न्यारी हुई तिनसे।
न्यारी होत सो भी खुदी,
ए खुदी निकलत नाहीं मैं ।। १३

---

७. खि० ३—४ ८. सि० १५—९ ९. सिं० १४—२३
१०. सिं० १४—२४ ११. सिं० १४—२५ १२. सिं० १४—३०
१३. सिं० १४—३२

(एक बात और भी ध्यान देने योग्य है) यदि परमात्मा की कृपा से यह मैं पहले ही मिट जाती तो इस संसार का सुख कौन अनुभव करता ? नश्वर और अविनाशी की तुलना के लिए इस 'मैं पन' को अस्तित्व देना आवश्यक था। इस नश्वर माया में छिपे अविनाशी आनन्द की झलक और भी प्रिय लगती है। ७

इस संसार और स्वामी के बीच पर्दा इसी शरीर का ही है। उस प्रियतम को छोड़कर यह नाशवान सुखों की कल्पना में खो गया है। ८

इस मायाजाल में फंसकर मैंने कितने गुनाह किए, यह देखकर मुझे भय लगा। सामने खड़े प्रियतम को देख डर बढ़ा तो मैंने सहायता के लिए उन्हें ही पुकारा। ९

मैंने अपने असंख्य अपराध देखे और हक की अपार मेहरबानियों का अनुभव किया। उन सबका लेखा जोखा करते नश्वर संसार में मेरा सारा जीवन व्यतीत हो गया। १०

आज तक किसी ने कभी भी ऐसे नीच काम नहीं किए होंगे। अपने गुनाह देखकर भी मैं बार बार अपराध ही करती रही। ११

अपने गुनाहोंकी गणना भी तो मैं तब ही कर सकी जब मैं अपने आपको बहुत चतुर मानने लगी। अपने चातुर्य का मुझे आभास हुआ यह भी तो अहंकार है। डरकर मैं फिर सावधान हो गई। १२

मैंने अपनी कमियों को जान लिया है और अब मैं सावधान हो गई हूं, यह कहना भी अहंकार है। मैं इस खुदी से भी अलग हो गई। परन्तु खुदी से अलग हूं, मुझमें अहं नहीं है, यह जान लेना भी सूक्ष्म रूप में अहंकार ही है। यह अहं भाव किसी भी तरह मन को छोड़ता नहीं है। १३

मैं तो तुमारी कीयल, अव्वल बीच और हाल।
तुम बिना जो कछु देखत, सो सब आग की झाल ।। १४

अब मैं मरत इन बिध, और न कोई उपाए।
खुदाई इलम सों मरिए, जो हकें दिया बताए ।। १५

ज्यों ज्यों एह विचारिए, त्यों तेहेकीक होता जाए।
इत जरा नूर जमाल बिना, रुह में कछू न बसाए ।। १६

इस्क मांगूं तो भी गुना,
और खुदीय भी गुना होए।
जो देखों हुकम इलम को,
मोहे बांध लई बिध दोए ।। १७

देकर नींद रुहन को, खेल देखावत नजर।
तो ए खेल कौन देखत, कोई है बिन हुकम कादर ।।१८

खुदी गुनाह सब हुकमें, मांगूं बोलूं सब हुकम।
पट खोलूं या जो करूं, सब हुकम कहे इलम ।। १९

---

१४. खि० ३—९ १५. खि० ३—३ १६. खि० ३—३६
१७. सिं० १५—१७ १८. सिं० १५—५ १९. सिं० १५—१९

(सब तरफ से निराश हो कर मैं आपकी शरण आ गई हूं।) मुझमें 'मैं पन' का भाव आपने ही दिया। 'मैं' आदि में बीच में और अब भी आपकी दी हुई खुदी को लेकर खड़ी हूं। आपके बिना मेरा कोई अस्तित्व नहीं है। आपके बिना तो मुझे सब कुछ अग्नि की लपटों के सदृष्य प्रतीत होता है। १४

यह बात मन में दृढ़ हो जाए तो अहंकार का नाश सम्भव है। इसके बिना कोई उपाय नहीं। स्वामी ने जो ब्रह्मज्ञान हमें दिया है उसी से यह बात निश्चित रूप से जानी जाती है। १५

स्वामी के दिए ज्ञान को जितना विचारा जाए उतनी ही यह बात मन में बैठ जाती है कि ज्योतिर्मय चैतन्य स्वामी की चेतना ही आत्मा में बल दे रही है। उनके बिना इसका कुछ वश नहीं चलता। १६

उनके निकट होने के लिए प्रेम की मांग करती हूं तो भी अपने अस्तित्व और अहं का बोध होने से गुनाह लगता है। उनके हुक्म और ज्ञान के प्रकाश में देखा तो पाया, मैं दोनों तरह से बंध कर विवश हो गई हूं। (प्रेम के बिना प्रियतम मिलते नहीं और प्रियतम से प्रेम मांगना भी उनके प्रेम की कमी का अहसास है) १७

रूहों को फरामोशी की नींद देकर यह स्वप्नवत संसार दिखा रहे हैं। इस खेल को देखने वाले भी तो उस सामर्थ्यवान स्वामी के हुक्म के ही स्वरूप हैं। उनके सिवा जब दूसरा कोई है ही नहीं, खेल और देखने वाले भी उसी के ही रूप हैं। १८

अहं का बोध, अपने गुनाह का ज्ञान सब उसके हुक्म से विविध प्रकार की लीला दिखाने के लिए हो रहा है। यहां मैं जो कुछ कहती हूं या मांगती हूं सब उसके हुक्म ही की प्रेरणा है। ज्ञान से समझ कर खुदी का पर्दा उड़ाकर प्रियतम से मिलूं या जो भी करूं सब हुक्म से होगा यह बात कादिर के इल्म ने भलि प्रकार सुझा दी है। १९

हुकम जोस गलबा करे, हुकम इलम रखे सुख को।
और जोर बढ़े इस्क, हुकम प्याले पिलावे माफक ।। २०

हुकम बेहोस न करे,
हुकम जरा जरा दे लज्जत।
हुकम पनाह करे सब रुहन,
हुकमें जानी जात निसबत ।। २१

हम जुदे न हुए अरस से,
और जुदे हुए बेसक।
हम रुहें खेल देख्या नहीं,
और खेल की बातें करी मुतलक ।। २२

ए बिध सब हुकम की, हुकमें किए बनाए।
वासते इसक रबद के, दोऊ ठौर दिए देखाए ।। २३

जिन हरबराओ मोमनो, हुकम आपे करत है काम।
खोल देखो आंखें रुह की, जिन देखो दृस्ट चाम ।। २४

---

२०. सिन० २४—७८ २१. सिन० २४—७९ २२. सिं० १६—१४
२३. सिं० १६—१८ २४. सिन २९—६३ २५. सिं० १२—२०

स्वामी की आज्ञा से ही आत्मा जोश में भर कर गुण अंग इन्द्रियों को वशीभूत कर पाती है। हुक्म से ही उसमें प्रेम अपना बल दिखा पाता है। हुक्म से ही इल्म आत्मा को संसार में सुख देने के लिए उत्सुक रखता है और उसकी शक्ति के अनुसार प्रेम और आनन्द के प्याले पिलाता है। २०

हुक्म ही रूह को प्रेम की हाला पीने के बाद बेसुध होने से बचाता है और उस आनन्द का थोड़ा थोड़ा अंश उसे देता है। हुक्म ही से आत्माएं शरण ग्रहण करती हैं स्वामी की आज्ञा हो तभी प्रियतम से सम्बन्ध जाना जाता है। २१

हमारे मूल, परात्म स्वरूप, स्वामी से अलग भी नहीं हुए और हुक्म ने हमारे यहां रूप बना कर उनमें हमारे ध्यान केन्द्रित किए। इस तरह हम उनसे अलग भी हुए और साथ भी रहे। हमारी परात्म ने खेल को यहां आकर नहीं देखा तो भी संसार की बाबत सोचा और चर्चा तो की ही। २२

यह सब लीला स्वामी के हुक्म की है। यह रचना सब उसी की है। प्रेम संवाद के कारण उत्पन्न परिस्थिति को सुलझाने के लिए अर्श और दुनिया एक साथ दिखा दिए। (इस लीला के द्वारा रूह को परमात्मा के सामर्थ्य और अपने अस्तित्व की हकीकत का पता चला)। २३

इसलिए, हे मोमिनों ! घबराने की आवश्यकता नहीं। सभी कार्य हक की आज्ञा से सिद्ध होने वाले हैं। स्वयं हक रूहों के आनन्द को बढ़ाने की योजना बनाया करते हैं। उनके हुक्म से जो होगा वह भी आनन्ददायी ही होगा। अपनी आत्म दृष्टि से इस बात को देखो। बाह्य दृष्टि से संसार के व्यवहारों से उसकी तुलना करने से बात समझ में नहीं आ सकती। २४

महामत चोए हे मोमनो, पाण के बिहारे तले कदम।
खिलकंदा वडी अरस में, जे कई हुकम इलम ।। २५

विरहानुभूति

पिया मोहे स्वांत न आवहीं, न कछू नैनों नीर।
पिया बिन पल जो जात हैं, अहिनिस धखे सरीर ।। १

उड़ी जो नींद अंदर की, परत न क्योंही चैन।
प्यारी पीउ के दरस की, कब देखों मुख नैन ।। २

सब तन विरहे खाइया, गल गया लोहू मांस।
न आवे अंदर बाहेर, या बिध सूके सांस ।। ३

रोम रोम सूली सुगम, खण्ड खण्ड खाण्डाधार।
पूछ पिया दुख तिनको, जो तेरी विरहिन नार ।। ४

न बैठ सके बिरहनी, सोएं सके न रोए।
राज पृथी पांव दाब के, निकसी या बिध होए ।। ५

---

१. क० ४—१ २. क० ४—५ ३. क० ५—२
४. क० ५—४ ५. क० ५ – ६

महामति कहती हैं हे मोमिनों हमको अपने चरणों के नीचे बिठाकर स्वामी ने बड़ी दिल्लगी अपने हुक्म और इल्म की आड़ लेकर की है। (हम उसकी इस दिल्लगी के लिए किए एक छोटे से लाड में अपने आपको सम्भाल न पाईं) २५

विरहानुभूति

(पिया से बिछुड़े मानो युग हो गए हैं। उनकी राह में आंखें बिछाए विरहिन बैठी है) हे पिया ! मुझे चैन नहीं आता-कल नहीं पड़ती। नयनों में रो रोकर पानी सूख गया है। प्रियतम के बिना जो भी क्षण बीत रहे हैं विरह की ज्वाला को बढ़ाते जा रहे हैं जिससे दिन रात मेरा शरीर जल रहा है। १

जब से अन्तरात्मा जागृत हुई और प्रियतम को पहचान लिया तब से चैन ही नहीं पड़ता। पिया के दीवार की आत्मा प्यासी हो उठी है। यही सोचती है कि जाने कब उनके मुखारविंद को देख कर आंखों को तृप्त करेगी। २

विरह ने शरीर को खोखला कर दिया। लहू सूख गया। मांस गल गया है। श्वास है, जो न तो आता है न बाहर ही निकल पाता है। ३

रोम रोम से शूली पर चढ़ जाना या तीक्ष्ण तलवार से अंग अंग कटवा देना शायद सहज होता। मेरे प्रियतम अपनी अंगनाओं से उनके विरह का दुख पूछ तो देख ! ४

विरहिन की दशा क्या हो गई है ? वह न तो बैठ पाती है न सोती है। रो भी तो नहीं सकती। उसका मन लगाने के लिए चाहे सारे संसार का राज्य उसे दे दिया जाए परन्तु वह उसे चाहती नहीं। पांव की ठोकर मार कर आगे निकल जाती है। ५

आठों जाम बिरहनी, सांस लिए हूक हूक ।
पत्थर काले ढिग हुते, सो भी हुए टूक टूक ।। ६

आंधी आई बिरह की,
तिन दियो ब्रह्मांड उड़ाए ।
बिरहिन गिरी सो न उठ सकी,
रही मूल अंकूर भराए ।। ७

नाहीं कथनी इस्क की, और कोई कथियो जिन ।
इसक आगे चल गया, सबद समाना सुंन ।। ८

मैं जान्या प्रेम आवसी,
बिरहा के वचनों गाए ।
सो अव्वल से ले अब लों,
बिरहा गाया लड़ाए लड़ाए ।। ९

सो गाए बिरह न आइया, प्रेम पड़या बीच चतुराए।
हांसी कराई हुकमें, वचनों प्यार लगाए ।। १०

सो गाए गाए हुआ दिल सख्त,
मूल इस्क गया भुलाए ।
मन चित बुध अहंकारें,
गुझ अरस रहया बनाए ।। ११

---

६. क० ५—११ ७. क० ६—६ ८. क० ७—६
९. सिन० २७—५० १०. सिन० २७—५१ ११. सिन० २७—५२

आठों पहर विरहिन आहें भरती है। उसके श्वास उच्छवास की उष्णता से काले पत्थर भी पिघल कर मोम बन गए। ६

विरहिन के दुख से प्रेरित विरह की एक ऐसी भयंकर आंधी आई कि समस्त ब्रह्मांड को अस्तित्वहीन कर दिया। उसके जोश में विरहिन ऐसी गिरी कि उठ न पाई। स्वयं उसका अस्तित्व मिटा तो प्रियतम के सम्बन्ध का अंकुर फूट पड़ा। ७

प्रेम के विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता और कोई प्रयास भी न करना। शब्द तो शून्य में खो जाते हैं और प्रेम आगे निकल जाता है। ८

मैंने भी समझा था कि विरह के वचनों को गाने से प्रेम आ जाएगा। इसलिए आरम्भ से आज दिन तक राग अलाप कर विरह के गीत गाती रही। ९

गाने से प्रेम तो न आया बल्कि विरह भी चतुराई में खो गया। प्रियतम के हुक्म ने ज्ञानपूर्ण वचनों से प्रेम लगाकर कैसा परिहास किया? १०

हुआ यह कि गा गा कर दिल भी कठोर हो गया। मूल इश्क का पता ही न चला कहां बह गया? मन चित बुद्धि और अहंकार के पर्दों में परमधाम का गहन रहस्य छिप गया। ११

इसक को ए लछन, जो नैनो पलक न ले।
दौड़े फिरे न मिल सके, अंदर नजर पिया में दे।। १२

नज़रों निमख न छूटहीं,
पर नाहीं लागत पल।
अन्दर तो न्यारा नहीं,
पर जाए न दाह बिना मिल।। १३

लागी लड़ाई आप में, एक विरहा दूजी आस।
ए भी विरहा पीउ का, आस भी पिउ विलास।। १४

माया काया जीव सों, भान भून टूक कर।
विरहा तेरा जिन दिसा, मैं वारूं तिन दिस पर।। १५

विरहा न छोड़े जीव को,
जीव आस भी पिउ मिलन।
पिया संग इन अंगें करूं,
तो मैं सुहागिन।। १६

विरहा न छूटे वल्लभा, जो पड़े विघन अनेक।
पिंड न देखूं ब्रह्मांड, देखों दुल्हा अपनो एक।। १७

---

१२. क० ७—९ १३. क० ७—१० १४. क० ८—४
१५. क० ८—७ १६. क० ८—३ १७. क० ६—४

वास्तव में प्रेम का लक्षण तो यह है कि नैन मूंदना भी नहीं हो पाता। दृष्टि पिया को ढूंढने के लिए इधर उधर भटकती फिरती है अन्तर्दृष्टि उन्हीं पर टिक जाती है। १२

प्रियतम पल भर भी नज़रों से ओझल नहीं होते परन्तु उनको खो देने के भय से विरहि पलक मूंदती नहीं। अन्तर में तो प्रियतम बसे हैं, अलग नहीं परन्तु प्रत्यक्ष मिलन न हो तो दाझ बुझती नहीं। १३

विरह और आशा में अन्तर्द्वन्द सा रहता है। प्रियतम से मिलन न हो तो विरह होता है। आशा भी उन्हीं के मिलन की होती है। १४

समस्त संसार की माया त्याग दूं, इस शरीर और जीव को तोड़ फोड़ कर चूरा बना दूं। जिस दिशा से तेरा विरह आए उस राह पर इन्हें कुर्बान कर दूं।

(संसार की सभी नियामतें, पिंड, ब्रह्मांड और प्राण आपके विरह को पाने के लिए न्यौछावर कर दूं)। १५

विरह जीव को जीने नहीं देता और मिलन की आशा में वह शरीर को छोड़ता भी नहीं। इसी शरीर से प्रियतम का मिलन हो तभी मैं सौभाग्यवती हूं। १६

विरहिन अनेक विघ्न बाधाएं आने पर भी विरह को छोड़ नहीं पाती। पिंड और ब्रह्मांड उसे दिखाई नहीं देते। सब ओर प्रियतम ही की झांकी देखने में आती है। १७

जो दुख तुमही बिछुड़े,
मोहे लाग्यो तासों प्यार।
एता सुख तेरे विरहा में,
तो कौन सुख होसी विहार।। १८

जब आह सूकी अंग में, सांस भी छोड़यो संग।
तब तुम परदा टाल के, दियो मोहे अपना अंग।। १९

तुम आए सब आईया, दुख गया सब दूर।
कहे महामत ए, सुख क्यों कहूं, जो उदया मूल अंकूर।। २०

संयोग सुख

ऐसा आवत दिल हुक्में,
यों इस्कें आत्म खड़ी होए।
हक सूरत दिल में चुभे,
तब रुह जागी देखो सोए।। १
बीज आत्म संग बुध के, सो ले उठया अंकूर।
या जुबां इन अंकूर को, क्यों कर कहूं सो नूर।। २

---

१८. क० ७—११ १९. ८—८ २०. क० ८—११
१. सिन० ४—१ २. क० ६—१०

तुम से बिछुड़ कर विरह का दुख प्यारा लगने लगा है, तड़पने में चैन मिला। तेरे विरह में इतना सुख है तो विलास में कैसा आनन्द होगा ? १८

जब शरीर से आह तक नहीं निकल सकती, श्वास भी रुक जाते हैं तब आप दुई का पर्दा हटाकर मिलन का सुख देते हो। १९

आप आए तो सब कुछ मिल गया। सभी प्रकार के दुख संताप से मुक्त हुई। महामती कहती हैं जो मूल संबध के अंकुर फूटने से आनन्द मिला है उसे शब्दों में कैसे कहूं ? २०

संयोग सुख

आपकी आज्ञा से ही यह बात दिल में उठ रही है कि यदि इस तरह प्रेम और विरह से आत्मा खड़ी हो जाए। आपका स्वरूप हृदय में बस जाए तो रूह जागृत होकर आपका दीदार कर सके। १

(शरीर की भूमि में) आत्मा का बीज धाम की बुद्धि ले कर प्रविष्ट हुआ तो सम्बन्ध का अंकुर फूटा। इस जिह्वा से उस अंकुर का नूर कैसे कहूं ! २

जो मासूक सेज न आइया,
देख्या सुन्या न कही बात ।
सुख अंग न लियो इन सेज को,
ताए निरफल गई जो रात ।। ३

पर दिल के जो अंग हैं,
धनी अरस तुमारा सोए ।
तुमें देखे कहे बातें सुने,
लेवे तुमारी बानी की खुसबोए ।। ४

अरस तुमारा मुझ दिल,
माहें अरस की सब बिसात ।
खाना पीना सुख सिनगार,
माहें सब न्यामत हक जात ।। ५

करना दीदार हक का,
एही मोमनो ताम ।
पानी पीवना दोस्ती हक की,
इनो एही सुख आराम ।। ६

मोमन तब लग बंदगी, जोलों आया नहीं इस्क ।
इस्क आए पीछे बंदगी, ए जाने मासूक या आसक ।। ७

---

३. सा० ६—३७ ४. सा० ६—३१ ५. सा० ६—२८
६. सिन० २३—६६ ७. सिन० २३—६७

(जीवन की निशा में) शरीर की सेज पर प्रियतम न आए, उन्हें देखा नहीं, सुना नहीं, उनसे बात नहीं की तो मानो यह रात्री-जीवन वेला-व्यर्थ हो गई। ३

परन्तु हे स्वामी, मेरे मन के सभी अंग ही तो तुम्हारा परमधाम हैं। वे तुम्हे देखते हैं, तुमसे बात करते हैं। उन्हें आपके वचनों की सुगन्धि प्राप्त है। ४

मेरा दिल ही आपका अरश-धाम मन्दिर है। उसमें परमधाम की सब शोभा सामग्री समाई है। मन का खान, पान, शृंगार तथा सब नियामतें परमात्मा के स्वरूप से ही हैं। ५

प्रियतम का दीदार ही ब्रह्मसृष्टि को आनन्द दे सकता है। स्वामी की मित्रता ही उनकी प्यास बुझा सकती है। उनका सुख चैन प्रियतम के मिलन में ही है। ६

जब तक प्रेम ही नहीं आता तब तक ही रूहें पूजा और उपासना आदि में मन लगाती हैं। प्रेम आने के बाद बंदगी क्या है? यह प्रियतम और प्रेमी ही जानते हैं। ७

आसिक की एही बंदगी, जाहेर न जाने कोए।
और आसिक भी न बूझहीं, एक होत दोउ से सोए।। ८

बैठ बातें करे अरस की, सोइ भिस्त भई बैठक।
दुनी बातें करे दुनी की, आखर तित दोजक।। ९

नजर खेल से उतरती देखिए,
त्यों अरस नजीक नजर।
यों करते लैल मिटी रुहों,
दिन हुआ अरस फजर।। १०

ए जो देत देखाई वजूद, रुह मोमन बीच नासूत।
ए दुनी जाने इत बोलत, ए बैठे बोले मांहें लाहूत।।११

दुनी में बैठ न्यारे दुनी से, किए ऐसी जुगत बनाए।
सुख दिए दोउ ठौर के, अरस दुनी बीच बैठाए।।१२

खाते पीते उठते बैठते, सोवत सुपन जागृत।
दम न छोड़े मासूक को, जाको होए हक निसबत।।१३

एही आहार आसकन का, एही सोभा सिनगार।
झीले सागर वाहेदत में, मेहेर सागर अपार।।१४

---

८. सिन० २३—६८ ९. सिन० २३—१४४ १०. सिन० २४—१४
११. सिन० २४—१५ १२. सिन० २४—३१ १३. सिन० २०—३
१४. सिन० १८—७१

प्रेमी की उपासना यही है कि उनके प्रेम को और कोई जान नहीं पाता। स्वयं प्रेमी को भी पता नहीं होता कि कब बंदगी या उपासना हो गई। दोनों एक हो गए तो उपासना किसकी कौन करे ? ८

ब्रह्मसृष्टि जहां बैठ कर परमधाम की बात करती है वहीं अर्श बन जाता है। संसार के लोग जहां बैठते हैं माया इकट्ठी करनें की ही बात करते हैं। अन्त में परिणाम दोज़ख का दुख ही है। ९

संसार से मन विरक्त होने लगे तो समझो परमधाम करीब आने लगा है। इसी तरह एक दिन अज्ञान की रात्री का अन्त हो जाता है और अखंड परमधाम का अरुणोदय हो जाता है। १०

इस नश्वर ब्रह्मांड में ब्रह्मसृष्टि के जो आकार दिखाई देते हैं, संसार के लोग तो यह समझते हैं कि यह संसार में ही रहते हैं परन्तु वे तो ऐसी बातें करते हैं मानो परमधाम में हीबैठे हों। ११

स्वामी ने अपना ज्ञान और प्रेम देकर बड़ी युक्ति से दुनिया में विठा कर उन्हें दुनिया से अलग कर दिया। इस प्रकार उन्होंने रूहों को संसार में बिठाकर परमधाम के और उनके मूल स्वरूप परात्म को परमधाम में बैठे हुए ही संसार का सुख दिखाया। १२

संसार के सभी काम खाना, पीना, उठना बैठना, सोना, सुपना देखना और जागना उनका सब ज्यों का त्यों चलता है, बस प्रियतम का संग भर हो जाता है और प्रियतम से जिनका सम्बन्ध है वे एक पल भी प्रियतम के बिना नहीं रहतीं। १३

प्रेमियों का यही आहार है और प्रियतम ही उनकी शोभा और शृंगार हैं। वे तो अद्वैत के सागर में गोते लगातीं हैं, जो मेहर का ही सागर है। १४

आसक अपने सौक सों, बिध बिध सुख लहे ।
सोई बिध रूप सरूप के, नई नई लज्जत लहे ।। १५

ए बेली फूल रूह मोमन,
सो बेल भई हक चरण ।
बेल जुदागी क्यों सहे,
यों कदम बिना रहें न मोमन ।। १६

तिन भाग की मैं क्या कहूं,
ए जिन दिल कदम बसत ।
धंन धंन कदम धंन ए दिल,
जो असल हक निसबत ।। १७

पाक दिल पाक रूह,
जामे जरा न सक ।
जाको ऊपर न डिंभक,
एक जरा न रखें बिना हक ।। १८

तो कहया मोमन खाना दीदार,
पानी पीवना दोस्ती हक ।
तवाफ सेज्दा इत हीं,
करें रूह कुरबानी मुतलक ।। १९

---

१५. सिन २१—३१ १६. सिन ६—४६ १७. सिन ७—२४
१८. सिन १—४२ १९. सिन ३—११

प्रेमी अपनी इच्छा और चाह के अनुसार ही प्रियतम के सुख लेता है। जैसा वह चाहता है उसके लिए उसके प्रियतम वैसा ही स्वरूप धारण करते हैं। इससे प्रेमी नित्य नये आनन्द का अनुभव करता है। १५

रूह मोमन यदि बेल के फूल हैं तो प्रियतम के चरण उनकी बेल हैं। बेल से अलग होकर फूल नहीं रहता इसी तरह मोमिन अपने प्रियतम के चरण कमल बिना नहीं रहते। १६

जिनके दिल में परमात्मा के चरण बसते हैं? उनके सौभाग्य की बात क्या कहूं ? वे चरण धन्य हैं जिनको प्रेमी का दिल मिले और यह तभी होता है जब उन दोनों में मूल का सम्बन्ध होता है। १७

(प्रियतम के चरणों का प्रेम उन्हीं के भाग्य में है) जो शुद्ध मन और पवित्र आत्मा को धारण किए हैं। जिनमें तनिक भी बनावट नहीं। प्रियतम के बिना तिल मात्र भी उनके जीवन में कुछ और नहीं होता। १८

इसीलिए तो कहा है कि मोमिनों का आहार परमात्मा का दर्शन होता है। प्रियतम की दोस्ती के जल से प्यास बुझाते हैं। उनके आसपास घूमते हैं। उन्हीं के, केवल उन्हीं के चरणों में शीश झुकाते हैं। अपना सर्वस्व उनकी राह में न्यौछावर कर देते। १९

बुध जागृत इलम हक का, और हकै का हुकम।
जोस अरस का दिल में, ए सब मिले दिल में हम।।२०

हम अरस परस हैं हक के, देखो मोमनो हिसाब।
हम हकमें हक हममें, और हक बिना सब ख्वाब ।।२१

आसिक मासूक दो अंग,
दोउ इस्के होत एक।
तो आसिक मासूक के दिल को,
क्यों न कहे गुझ विवेक ।।२२

जब देखो सीतल नजरों, सब ठरत आसिक के अंग।
सब सुख उपजे अरस में, हक मासूक के संग ।।२३

मैं नैनो देखों नैन हक के,
हूई चारों पुतली तेज पुंज।
जब नैन मिले नैन नैन में,
नूरै नूर हुआ एक गंज ।। २४

जो जोत समूह सरुप की,
सो नैनो में न समाए।
जो रुह नैनों में न आवहीं,
सो जुबां कहयो क्यों जाए ।। २५

---

२०. सिन २—४६ २१. सिन २—१२ २२. सिन २०—१०३
२३. सिन १४—३३ २४. सिन १४—३४ २५. सा० १०—५४

(अपना आपा उनके चरणों में डालते ही) महामति, महान बुद्धि का जागृत ज्ञान, स्वामी के हुक्म का बल और परमधाम का जोश सब मिल कर हमारे दिल में उतर आए। २०

इस प्रकार स्वामी से हमारा अरस परस, आपस का सम्बन्ध जुड़ गया। प्रियतम हममें और हम प्रियतम में इस प्रकार मिले कि हक का ही अस्तित्व रह गया और सब स्वप्न की तरह मिट गया। २१

आशिक और माशूक देखने में अलग अस्तित्व रखते हैं परन्तु प्रेम से एक हो जाते हैं। तो फिर आशिक माशूक के दिल के गूढ़ रहस्य खोलने में सफल क्यों न हो। २२

जब आप स्वामी अपनी प्रेयसी को शीतल दृष्टि से देखते हो तो उसके अंग प्रत्यंग की तपन मिट जाती है। वह अपने प्रियतम के साथ परमधाम के सभी आनन्द पा जाती हैं। २३

मैं अपने नयनों से प्रियतम को देखती हूं। उनके नेत्रों की ज्योति मेरी आंखों में पड़ने से चारों पुतलियां देदीप्यमान दिखाई देती हैं। नयनों से नयन मिलते ही एक अपूर्व तेज पुंज झलक उठा। २४

इतना नूर ही कहीं समाता नहीं है तो हक के पूर्ण स्वरूप-श्री राज जी, श्यामा और उनकी अंगनाओं की सामूहिक ज्योति आँखों में कैसे समा सकती है? जो नयन समा नहीं पाते उस सौंदर्य और ज्योति का वर्णन शब्दों में कैसे हो? जिह्वा से कैसे कहा जाए? २५

आसिक रूह जित अटकी, अंग भूखन या बस्तर।
यासों लगी गुफतगोए में, सो छूटे नहीं क्योंए कर ।।२६

रात दिन बसे हक अरस में,
मेरा दिल किया अरस सोए।
क्यों न होए मोहे बुजरकियां,
ऐसा हुआ न कोई होए ।। २७

मोको धनिएं देखाइया, सब इस्कै चौदे तबक।
इत ज़रा न बिना इस्क, अपना ऐसा देखाया हक ।।२८

जेता सुख तुमारे अरस में,
सो सब हमारे दिल।
ए सुख रूह मेरी लेवहीं,
जो दिए इन अरस में मिल ।। २९

दूसरा इत कोई है नहीं, एकै नूर जमाल।
ए सबमें हक नूर है, याही कौल फैल हाल। ३०

एक जरे जिमी की रोसनी, सो ढांपे कै कोट सूर।
तो जिमी पहाड़ मोहोलन के, सो कैसी होसी नूर ।।३१

देखो अंबार इस्क के, या जड़ या चेतन।
जो कहूं नज़रों श्रवणों, सो इस्कै को वतन ।। ३२

---

२६. सा० १०—५८ २७. सिन १—३ २८. सा० १२—४४
२९. सा० ९—३४ ३०. परि० ३२—८४ ३१. परि० २९—२३
३२. परि० २८—३०

प्रेमी की रूह जिसे देखती है, चाहे हक का अंग हो बस्तर हो या भूषण हो, वहीं अटक कर रह जाती है। उसी से मानो त्रात करने में व्यस्त हो जाती है। उसे छोड़ नहीं पाती। २६

रात दिन जो प्रियतम परमधाम में बसते थे उन्होंने कृपा करके मेरे मन में रहना स्वीकार किया तो मेरा मन उनका अर्श बन गया। इस बात पर मुझे गर्व क्यों न हो ? इससे बड़ा सम्मान न तो कभी किसी को मिला न मिलेगा। २७

कृपालु स्वामी ने मेरे लिए इस प्रेम विहीन शुष्क ब्रह्मांड को भी प्रेम रस से प्लावित कर दिया। अपना ऐसा प्रेममय स्वरूप दिखाया कि अब लगता है प्रेम के बिना कुछ है ही नहीं। २८

आपके मेरे मन में विराजने से परमधाम के सभी सुख भी साथ उतर आए। अर्श में आपने जो सुख मुझे दिए थे वे सब मेरी रूह ने यहीं प्राप्त कर लिए। २९

यहीं बैठे आपके अद्वैत स्वरूप का दीदार पाया तो जाना कि एक नूर जमाल स्वामी के बिना दूसरा कोई नहीं है। वे ही वाहिद सत्ता हैं। परमधाम सब उनके नूर का ही प्रकाश हैं। वहां मन, वचन, कर्म, कार्य व्यवहार सब नूरमय है। ३०

परमधाम के एक कण का प्रकाश यहां के कई करोड़ सूर्य के प्रकाशको भी फीका कर देता है तो फिर वहां की धरती, पहाड़ों और महलों का नूर कैसा होगा ? ३१

वहां चर अचर सब प्रेम का पुंज है। जिधर दृष्टि गई प्रेम का प्रकाश ही देखा। जो सुना वह प्रेम का ही माधुर्य था। वह तो प्रेम का ही धाम है। ३२

कहा कहूं ठकुराई की,

और क्यों कहूं बुध बल।

क्यों कहूं इस्क पेहेचान की,

और क्यों कहूं सुख नेहेचल ।। ३३

ए खूबी इन वखत की, हकें दई देखाए।

ए ख्वाब में प्यार लगो, अरस की ठकुराए ।। ३४

घास करत है सेजदा, करें सेजदा दरखत।

तो क्यों न करें चेतन, यों फुरमान फुरमावत ।। ३५

क्यों कहूं सुख रूहन के, जो इन पीउ की आसक।

भर भर प्याले लेवहीं, फेर फेर देवें हक ।। ३६

क्यों कहूं सुख रूहन के, जिनका साकी ए।

हक प्याले इस्क के, भर भर रूहों को दे ।। ३७

यों अरस सारा इस्क मै, एक जरा न जुदा होए।

खाविंद सबों पिलावहीं, क्यों कहिए इस्क बिन कोए।। ३८

सरूप ग्रहिए हक का,

अपनी रूह के अन्दर।

पूरन सरूप दिल आइया,

तब दोउ उठ खड़े बराबर ।। ३९

---

३३. परि० २९—८३ ३४. परि० २९—७७ ३५. परि० ३२—३९
३६. परि० ११—४५ ३७. परि० ११—५१ ३८. परि० २८—३२
३९. सिन० २५—६१

(अखंड धाम की) प्रभुता का बखान कैसे हो ? वहां के बुद्धि और बल का पार नहीं पाया जा सकता। प्रेम और पहचान का वर्णन करने की शक्ति शब्दों में नहीं। अविनाशी आनन्द का तो कहना ही क्या ? ३३

पारलौकिक आनन्द, मिलन सुख और असीम महिमा प्रियतम ने इहलोक में दिखा दी तो इस स्वप्नवत ब्रह्मांड में अपनी प्रभुता प्यारी लगी। ३४

कुरान में लिखा है कि अर्श के घास, पात और वन भी स्वामी को सिज्द: करते हैं। जब अचर वस्तुओं का यह हाल है तो फिर चेतन पशु और जानवर अपने प्रियतम और प्यारी को नमन क्यों न करें ? ३५

(घास, पात पशु आदि के सुख नहीं कहे जाते तो) अर्श की रूहों के आनन्द का वर्णन कैसे हो जो स्वयं प्रियतम की प्रेमिका हैं। उनके महबूब मेहरबान ही उनके साकी हैं और अपने हाथों प्रेम रस के प्याले भर भर कर पिलाते हैं। ३६

उन आत्माओं के सौभाग्य का क्या कहना जिनको पिलाने वाला स्वयं अक्षरातीत परमात्मा है पूर्ण प्रेमी जिन्हें प्रेम के छलकते प्याले अपने हाथों से भर कर देते हैं। ३७

परमधाम पूरा का पूरा इश्क से पूर्ण, प्रेममय है। एक कण भी वहां से अलग नहीं हो सकता क्योंकि वे सब हक के सींचे हुए हैं। सबको प्रेम में उन्मत बनाने वाले जब स्वयं प्रियतम हों तो प्रेप के बिना भला कौन रह पाएगा ? ३८

ऐसे प्रेमी परमात्मा का स्वरूप अपनी आत्मा के अन्दर ग्रहण कीजिए। जब पूर्ण स्वरूप पर ध्यान केन्द्रित हो गया तो आत्मा परमात्मा दोनों बराबर आमने सामने खड़े हो जाते हैं। ३९

जो तू ले हकीकत हक की, तो मौत का पी सरबत।
मुए पीछे हो मुकाबिल, तो कर मजकूर खिलवत।।४०

जोलों जाहेरी अंग न मरें, तोलों जागे न रूह के अंग।
ए मजकूर रूह अंग होवहीं, अपने मासूक संग।।४१

कौल फैल हाल आइया, तब मौत आवेगी तोहे।
तब रूह की नासिका को, आवेगी खुसबोए।। ४२

बेसक होए दीदार कर, जे जवाब होए बेसक।
एही मोमनो मारफत, खिलवत कर साथ हक।। ४३

सब अंग सुफल यों हुए, करी हक सों सलाह सबन।
देख बोल सुन खुसबोय सों, जिनका जैसा गुण।।४४

यों हुकम नूर जमाल का, अरस सुख देत रूहों इत।
चुन चुन न्यामत हक की, रूहों हुकम पोंहोचावत।।४५

---

४०. सिन० २५—६५ ४१. सिन० २५—६६ ४२. सिन० २५—६७
४३. सिन० २५—७० ४४. सिन० २५—७३ ४५. सिन० २४—५८

स्वामी की पहचान का पूरा सुख लेना हो तो मृत्यु के स्वाद का अनुभव करो। अपने आप को, अहं को, मार कर उनके सामने आ जाएं तभी एकान्त में मीठी चर्चा का सुख मिलता है। ४०

जब तक बाह्य दृष्टि और शरीर का बोध समाप्त नहीं होता तब तक आत्मा के अंगों में स्फुरण नहीं होता—उनका जागना नहीं हो पाता। जागृत आत्मा ही प्रियतम से प्रेम चर्चा कर पाती है। ४१

व्यवहार, बोल और रहनी जागृत आत्मा की सी हो जाए तो नश्वर शरीर का भान नहीं रहता। तब कहीं रूह की नासिका परमधाम की सुवास ले पाती है। ४२

इतना हो जाने पर निश्चिन्त होकर प्रियतम का दीदार करो, अपनी कही बातों का प्रेम पूर्ण उत्तर प्राप्त करो। मोमिनों की मारफत—पूर्ण पहचान यही है कि अपने स्वामी से एकान्त का सुख पा लें। ४३

मारफत में आ जाने पर जीवन सफल होता है। इस शरीर के सभी अंग अपना सौभाग्य पा लेते हैं। जिस अंग का जो गुण है उसे उसी रूप में प्रियतम सुख देते हैं। आंखें उनका स्वरूप देखकर तृप्त होती हैं। वाचा उनसे बात कर सार्थक होती है। कान मधुर स्वर सुन कर तथा नासिका वहाँ की सुवास पा कर धन्य होती है। ४४

इस प्रकार परमात्मा का हुक्म उनकी रूहों को इस संसार में जागृत कर परमधाम के सुख देता है। परमधाम और परमात्मा की नियामतें चुन चुन कर रूहों को यहीं ला देता है। ४५

कहें हुकम नूर जमाल का, मोहे प्यारे अति मोमन।
महामत कहें दोनों ठौर, हमको किए धंन धंन ।।४६

अरस मिलावा ले चली,
अपने संग सुभान ।
किया चाहया सब दिल का,
आगू आए लिए मेहेरबान।। ४७

मिली मासूक के मोहोल में माननी,
आसक अंगन काहें अंग ।
जानू जामनी बीच जुदी हुई हक जात सों,
पेहेचान हुई प्रात हुए पीउ संग ।। ४८

मन सुकन तन भए सब एकै,
एकै जात सिफात सब बात ।
एकै अंग संग रंग सब एकै,
सब एक मता अरस बका बिसात ।। ४९

नाहीं जुदा काहीं जाहीं अरस माहीं,
मिले रूह भेले दिल एक हुए ।
तो कलूब किबला भया मकबूल अल्लाह कहया,
अवल आखर मिलएक हुए न जुए ।। ५०

४६. सिन० ६—६४ ४७. सा० ६—१२९ ४८. कि० ११७—१
४९. कि० ११७—२ ५०. कि० ११७—३

नूर जमाल स्वामी का हुक्म कहता है मुझे मोमिन बहुत प्यारे हैं। उसी हुक्म की बदौलत रूहें अपने प्रियतम को पाकर यहां धन्य हुई और यहां उन्हें मिल पाने के कारण परमधाम में भी धन्यता को पा सकीं। ४६

श्यामा अपने अर्श की संगी आत्माओं को एकत्र कर उन्हें संग ले कर चलीं। यहां उनकी मनोकामनाएं पूर्ण हुई तो परमधाम में पहुंची। प्रियतम ने आगे आकर उनकी आगवानी की। ४७

अपने अर्श दिल के महल में प्रियतम के मान से भर अंगना अपने स्वामी से मिली तो दोनों एक रूप हुए। ऐसा प्रतीत हुआ मानो रात को अपने प्रियतम से आत्मा बिछुड़ गई थी और प्रातः होते ही, स्वामी के पहचान होते ही, व्यक्तित्व में खो गई। उनसे मिल गई। ४८

मन, वचन और तन सब एक हुए, उनकी ज़ात अपनी हुई (नश्वर अविनाशी हुआ) उनके गुण रूह में आए। सब बातें उनकी सी हो गईं। एक अद्वैत का रंग आया उनका संग उन जैसा कर गया। अरस की पूंजी वहाँ की वस्तुएं यहीं मिलीं। ४९

उनसे तनिक भी जुदाई न रही। जहां थी वहीं अपने को अर्श में पाया। रूह मिली तो दिल मिल गए। जब यह दिल प्रियतम का घर बन गया तो प्रियतम ने कहा 'तू मुझे स्वीकार है।' पहले एक थे और अन्त में भी ऐसे एक हुए मानो अलग थे ही नहीं। ५०

हक अरस परस सरस सब एक रस,
वाहेदत खिलवत निसबत न्यामत ।
महामत अलमस्त होए आवे उमत लिए,
पीवत आवत हक हाथ सरबत ।। ५१

स्वामी प्रियतमा अरस परस, परस्पर मिलकर एक रस हो गए । अद्वैत का, एकान्त का सम्बन्ध और सभी नियामतें मिल गईं । महामति उस रंग में रंगी, मस्ती में डूबी अपनी उम्मत रूहों को लिए चली आती है और स्वामी के हाथों प्रेमामृत को छके चली जा रही है ।
५१

---

५१. कि० ११७ – ४